आकाशीय रचना : दयाल फ़कीर

भूमिका

मित्रो! सूर्य की किरण जिस कोण से पृथ्वी पर आती है वह उसी कोण से अपने आधार से संबंध रखती है और उसको उस मार्ग का अनुभव हो सकता है.
इस रचना का अन्त नहीं है. इसका पार न किसी ने पाया न पा सकेगा. उस परम तत्व की मौज काम करती है और हम सब जीव जन्तु उस मौज के अधीन अपना काम करते हैं.

यह सारी रचना स्थूल, सूक्ष्म और कारण प्रकृति की बनी हुई है. जिसके आधार पर यह सब रचना है उसकी शक्ति अंश रूप में स्वयं उसमें आकर सैर करती है और जब उकता जाती है वापिस लौट जाती है. इसका नीचे आना भी आकाशीय दुनिया की सैर है और वापिस जाना भी सैर है. इस सैर में आनन्द है, सुख है. यह सुख और आनन्द विभिन्न प्रकारों के हैं. मेरे अस्तित्व ने इस मानसिक और आत्मिक लोक की अपने अन्तर में काफी सैर की है. शारीरिक रूप से भी बसरा, बग़दाद, तुर्किस्तान और हिन्दुस्तान के विभिन्न भागों की सैर की है. मेरी वर्तमान दशा कुछ विचित्र है. अब मन आत्मिक अवस्था से उपराम हो रहा है.

रग रग जिम्म के और ख्याल के अणु अणु!
परम आनन्द का रूप होकर मैं मस्त बनूँ
इस मस्ती या सरूर की हुसूलगी के लिए
शायद यह जिस्म बना हो ऐसा मैं अनुभव करूँ
पुर लुत्फ सैर करता हूँ ऐसी जगह की आहाहा
मगर अफसोस कि इसको मैं न वर्णन कर सकूँ
दुनिया वालो दे चला अपनी सैर का तुमको पता
इशारों के सिवाय अफसोस न कुछ कह सकूँ
सब से ऊँचा आत्मिक एक देश है
जिसमें रहता हुआ मैं विस्माधि हो रहूँ

इस आत्मिक लोक से ऊपर एक और देश है जहाँ केवल परम तत्व या हमारा तुम्हारा निज

स्वरूप लहराता रहता है.

हम उसी देश के वासी बनें, जहाँ बारह मास बिलासी है
न सफर की कोई तकलीफ वहाँ, वह चेतन अनुभव प्रकाशी है
इस अनुभव में संकल्प नहीं है, न वहाँ सतचित आनन्द रासी है
वह अपना रूप सुहाना अद्भुत, जहाँ भूका ना कोई प्यासी है
न खौफ़ वहाँ न बैरी कोई, नहीं कोई साजन नहीं साथी है
वह आप ही आप परम तत्व है, अपनी ज़ात आप अविनाशी है

देह से मनुष्य स्थूल प्रकृति की सैर कर सकता है बशर्ते कि भोजन वस्त्र का प्रबंध हो. मन से मनुष्य सूक्ष्म प्रकृति की सैर कर सकता है बशर्ते कि विश्वास और श्रद्धा वाला हो. सुरत (आत्मा) से मनुष्य कारण प्रकृति की सैर कर सकता है बशर्ते कि प्रकाश और शब्द, जो प्रकृति का सार है, साथ हो.

इस अनुभव के आधार पर कह रहा हूँ कि वर्तमान विज्ञानवेत्ता जो ऊपर के लोकों में स्थूल शरीर के साथ जाना चाहते हैं असम्भव है. आकाशीय जगत की सैर योगी और संतजनों के हिस्से में आ सकती है. सम्भव है आने वाले समय में कुछ और खोज (Research) हो.
अपने कर्म भोगवश उन बाह्य प्रभावों से जो मुझ पर बचपन में पड़े मैंने साधन आदि किये. जो अनुभव हुआ वह मैंने विभिन्न शब्दों और लेखों में प्रगट किया है.

केवल अपने भाव प्रकट कर चला हूँ ताकि कोई मेरा जैसा जिज्ञासु किसी आप्त पुरुष के अनुभव को अपने निज अनुभव के साथ मिलाना चाहे तो उसको सहायता मिल सके.

आकाशीय रचना

(लेखक परमसंत दयाल फकीर साहब)

लेख नं०1

ट्रिब्यून समाचार पत्र के पढ़ने से ज्ञात हुआ कि 7 सितंबर सन् 1956 को मंगल तारा पृथ्वी के निकट आ रहा है और वैज्ञानिक अपनी दूरबीनों से उसका निरीक्षण करके अपने अनुभव में वृद्धि करेंगे.

विभिन्न धार्मिक पुस्तकों में भी आकाशीय रचना, नक्षत्रों व तारों आदि का वर्णन है. विशेष कर हिन्दुओं का ज्योतिष शास्त्र इस विषय पर स्पष्ट प्रकाश डालता है और उनके रंग, रूप, चाल-ढाल और गुणकर्म आदि के संबंध में विस्तृत विवरण देता है. यह विद्या प्रचीन ऋषियों और योगियों के अनुभव का फल है. मैंने पढ़ा है कि गुरु नानकदेव भी आकाशीय रचना के विभिन्न लोकों में गये थे. राधास्वामी मत के ग्रन्थों में भी विभिन्न लोक- लोकान्तरों का उल्लेख आया है और उनकी लम्बाई, चौड़ाई, रंग, रूप और उनमें रहने वाली सृष्टि के संबंध में स्थान-स्थान पर संकेत पाये जाते हैं. मेरा अपना समस्त जीवन भी इसी मार्ग में व्यतीत हुआ है. आज विचार आया कि मंगल तारे को अपने अन्तर में देखूँ कि वहाँ क्या कुछ है? एक घंटे तक यत्न किया किन्तु सुरत मंगल तारे की ओर आकर्षित न हुई, और स्वाभाविक रूप में चन्द्र लोक की ओर आकर्षित होते हुए ऊपर के लोकों में चली गई.

प्रश्न- क्या कारण है कि आपकी सुरत मंगल तारे की ओर आकर्षित न हो सकी?
उत्तर- मंगल तारा शक्ति का भण्डार है और उसका केन्द्र मस्तिष्क में बाईं ओर है. शक्ति का प्रयोग सदैव क्रोध अथवा जोर आज़माई के भाव के अंतर्गत हुआ करता है और जोर आजमाई में अपने अहंकार और आपे को दिखलाने तथा बदला लेने का भाव कार्य करता है. चूँकि मेरा जीवन प्रारंभ से ही शान्ति प्राप्त करने, उस मालिक अथवा परम तत्व से मिलने की ओर लालायित रहा है इसलिए क्रोध और अहंकार भाव, साधन से कम हो गये हैं. इसलिए मेरी सुरत का मंगल तारे की ओर आकर्षित होना असंभव है.

मनुष्य के मस्तिष्क में तीन नाड़ियाँ हैं- ईड़ा, पिंगला, सुषुम्ना. ये मस्तिष्क में फैली हुई हैं और उनके भीतर मनुष्य के भाव, विचार उसी प्रकार चक्कर लगाते रहते हैं जिस प्रकार स्थूल शरीर में रुधिर, वात, पित्त और कफ़ आदि और स्थूल शरीर की नाड़ियाँ भोजन के पदार्थों से अंगों के पालन-पोषण का आवश्यक अवयव बनाकर फुजला को मलमूत्र और पसीना आदि के रूप में बाहर निकालती रहती हैं. यही क्रिया सूक्ष्म रूप में होती है अर्थात् ये तीन नाड़ियाँ मस्तिष्क के भीतर कार्य करती हुई उसके मानसिक संतुलन को नियत रखने का प्रयत्न करती रहती हैं. चूँकि परमतत्व से मिलने की इच्छा में भीतर सचाई, पवित्रता, प्रेम और विरह, भक्ति और ज्ञान के भाव प्रबल रहे हैं इसलिए प्रकृति की प्रतिकूलता के कारण मेरी सुरत मंगल तारे की ओर न जा सकी.

प्रश्न- क्या यह सम्भव है कि मनुष्य अपने अन्तर विभिन्न केन्द्रों पर ठहर कर बाह्य रचना

का ज्ञान प्राप्त कर सके?

उत्तर- मनुष्य शरीर सम्पूर्ण रचना का नमूना है. जो कुछ रचना में है, सब छोटे रूप में मनुष्य के शरीर में विद्यमान है. इस लिए यदि मनुष्य शरीर के भीतर किसी विशेष केन्द्र पर अपनी सुरत एकाग्र करे तो उसका संबंध बाह्य रचना में उस शक्ति के भंडार से हो जाता है जिस पर सुरत को एकाग्र किया गया है और वह उस भण्डार का ज्ञान प्राप्त करता हुआ अपने भीतर उस विशेष शक्ति को बढ़ा सकता है. यह संबंध अथवा क्रिया रेडियो के नियम के अनुसार होती है. जो भी भाव, वासनायें, इच्छायें हम में विद्यमान हैं उन सब का भंडार बाहर भी प्रकृति की रचना में विद्यमान है, जिसको हम विभिन्न नक्षत्र लोक अथवा देश कहते हैं. किन्तु स्मरण रहे कि प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक मार्ग का पूर्ण ज्ञाता नहीं हो सकता. चूँकि विशेष-विशेष मनुष्य विशेष-विशेष भावनाओं और विचारों में दक्ष होते हैं इसलिए उन्हें सफलता भी उन्हीं के अनुसार होती है.

प्रश्न- आपके उत्तर से स्पष्ट है कि जिन-जिन ऋषियों ने अपने अन्दर प्रवेश करके जिन-जिन नक्षत्रों और तारागणों का अनुभव प्राप्त किया उनके भीतर वह गुण विद्यमान थे जो उन तारागणों से संबंध रखते हैं. यदि मेरा विचार ठीक है तो मानना होगा कि उन ऋषियों के मन में कुछ बुराइयाँ भी थीं अर्थात् क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, मान, बड़ाई की इच्छा भी अवश्य होगी?

उत्तर- आपका विचार ठीक है. कारण यह है कि समस्त ऋषि आत्मपद अथवा मोक्ष को प्राप्त नहीं हुए थे और नहीं होने चाहिए थे. क्योंकि आत्मपद अथवा मोक्ष प्रकृति से परे की अवस्था है जहाँ शारीरिकता और मानसिकता का अभाव है. और यह समस्त तारागण लोक-लोकान्तर, आदि ब्रह्म की मानसिक अथवा संकल्प की प्रकृति के भीतर है.

गो गोचर जहाँ लग मन जाई, सो माया कृत जानहु भाई

इस लिए निज अनुभव के आधार पर अपने कर्म भोगवश आज मैं स्पष्ट शब्दों में कहने का साहस करता हूँ कि जब तक कोई मनुष्य संकल्प के जगत से, जिसमें विचार, आशा और भाव विद्यमान हैं और सूक्ष्म प्रकृति अथवा माया का खेल है, ऊपर नहीं जाता, वह उस परमतत्व या निज स्वरूप को प्राप्त नहीं कर सकता. यद्यपि वास्तविकता की दृष्टि से वह स्वयं वही है किन्तु उसके ऊपर प्रकृति के खोल चढ़े हुए हैं. इसलिए इच्छुक और अभिलाषी व्यक्ति केवल समझ अथवा ज्ञान से ही निर्वाण अथवा मोक्ष को प्राप्त कर सकता है. किन्तु

यह समझ अथवा ज्ञान पुस्तकीय ज्ञान नहीं है वरन् क्रियात्मक साधन से प्राप्त होता है. साथ ही स्मरण रहे कि क्रियात्मक साधन भी पृथक-पृथक हैं. मोक्ष की प्राप्ति अथवा प्रकृति से परे जाने का साधन और है और प्रकृति के देशों का ज्ञान प्राप्त करने का साधन और है. इसलिए पूर्ण पुरुष का संग और उसकी आज्ञा का पालन आवश्यक है. वह प्रत्येक व्यक्ति की प्रकृति का निरीक्षण करके उसकी चित्तवृत्ति के अनुकूल साधन बता सकता है. प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक ही नियम और आदेश लाभदायक नहीं हो सकता.

मैं मंगल तारा को देखने की इच्छा से अन्तर प्रविष्ट हुआ था किन्तु अनुकूलता के अभाव के कारण सुरत उधर आकर्षित न हुई. इसलिए वासना के नियम के अनुसार चन्द्र लोक की ओर आकर्षित हो गया यद्यपि सामान्य दशा में मेरा मार्ग अब चन्द्र लोक भी नहीं रहा. हाँ! बाल्यकाल में जबकि नेकी, सचाई, ईमानदारी आदि के भाव प्रबल थे तो मैं चन्द्रलोक से होकर जाया करता था. उस समय यह दशा थी कि जब संसारी जीव जो रोग, निर्धनता अथवा अन्य सांसारिक दुखों के मारे मेरे पास आते थे तो मन में सहानुभूति उत्पन्न होती थी. उनके हित के विचार से अपने अन्तर प्रविष्ट होता था तो चन्द्रलोक सम्मुख आता था. वहाँ दातादयाल की मनोहर मूर्ति को प्रकाश रूप में देखकर इच्छा करता था कि यह जीव सुखी हो जाय तो वह जीव सुखी हो जाते थे. इसलिए निज अनुभव के आधार पर कहता हूँ कि चन्द्रलोक एक बुलबुले के रूप की गैस अथवा धुंध का बहुत बड़ा लोक है. उसमें स्थूल इच्छायें अथवा पदार्थ और शारीरिक जीवन की इच्छायें गैस अथवा धुंध के रूप में रहती हैं जो एक प्रकार का द्रव्य है.

प्रश्न- इसका प्रमाण क्या है?

उत्तर- मेरा निज अनुभव. जब मेरे मन की वृत्तियाँ किसी वासना अथवा इच्छा के अंतर्गत अपने अंतर इकट्ठी होती हैं तो वहाँ वह बुलबुले का रूप अपने भीतर उत्पन्न करती हैं. किन्तु मन और है और उसकी वासनायें अथवा इच्छायें जो मन से निकलती हैं अन्य वस्तु हैं इसलिये वह बुलबुले का रूप अथवा धुंध जो वास्तव में अपनी ही वासनायें होती हैं मन का प्रतिबिंब लेकर प्रकाशित हो जाती हैं और चन्द्रमा जैसे प्रकाश के रूप को धारण कर लेती हैं. शास्त्र भी ऐसा ही कहते हैं कि सूर्य से चन्द्रमा का विकास हुआ और फिर चन्द्रमा से बुद्ध आदि उत्पन्न हुये. वर्तमान विज्ञान ने भी सिद्ध किया है कि चन्द्रमा का प्रकाश अपना नहीं है वरन् वह सूर्य से प्रकाश लेता है. वास्तव में सूर्य ही आदि मनु है और समस्त नक्षत्र व तारागण उसकी संतान हैं. इसलिये हम अपने भावों और विचारों के अनुसार अपने भीतर

एकाग्र होकर अनुकूलता रखने वाले तारागणों से संबंध जोड़ सकते हैं, किन्तु स्मरण रहे कि प्रत्येक प्राणी का चन्द्रलोक से संबंध जोड़ना आवश्यक और प्राकृतिक है क्योंकि यह स्थूल प्रकृति का स्रोत है. यही कारण है कि हिन्दुओं के ज्योतिष शास्त्र के अनुसार किसी मनुष्य की जन्मपत्री देखते समय लग्न मुहूर्त आदि में प्रत्येक स्थान पर चन्द्रमा की शक्ति को विशेष रूप में देखा जाता है.

प्रश्न- कोई अन्य प्रमाण दीजिये.

उत्तर- शास्त्रों को पढ़ो. उल्लेख आया है कि शरीर छोड़ने के पश्चात् संसार के समस्त प्राणी अपने कर्म के अनुसार तीन मार्गों से होकर जाते है. उनमें एक चन्द्रलोक का मार्ग भी है. तात्पर्य यह है कि परमतत्व का अंश जिसके ऊपर प्रकृति के विभिन्न प्रकार के खोल चढ़े हुए हैं, इन खोलों के कारण से शरीर के त्याग के पश्चात् अथवा अपने आप मृत्यु की दशा या समाधि की दशा उत्पन्न करके चन्द्रलोक में जाता है. कारण यह है कि चन्द्रलोक स्थूल और सूक्ष्म प्रकृति की वासनाओं का भंडार है और फिर वहाँ से वासनाओं के अनुसार दूसरे लोकों में जन्म धारण करता है.

प्रश्न- वह कैसे?

उत्तर- जैसे लोहे के अणु अथवा परमाणु चुंबक की ओर खिंचते हैं. चूँकि चन्द्रलोक प्रत्येक प्रकार की स्थूल प्रकृति की वासनाओं का भंडार है, इसलिये न तो वहाँ हमारे जैसे मनुष्य पशु और वृक्ष, पहाड़ और नदियाँ हैं, न खेत, न सिंचाई होती है. यद्यपि वर्तमान वैज्ञानिकों ने दूरबीन द्वारा चन्द्रमा का जो निरीक्षण किया है वह इन वस्तुओं का अस्तित्व बतलाते हैं. वास्तविकता यह है कि चन्द्रलोक वास्तव में गैस या धुंध का भण्डार है और जब उस पर सूर्य का प्रकाश पड़ता है तो वैज्ञानिकों को, जिनके मन पर इस स्थूल प्रकृति के देश अर्थात् दुनिया के संस्कार विद्यमान होते हैं वह धुंध अथवा गैस जंगलों, पहाड़ों और नदियों आदि के रूप में दिखाई देती है जिस प्रकार बादलों को देखकर मनुष्य अपने आंतरिक भावों के प्रभावान्तर्गत उनमें विभिन्न प्रकार के रूपों की कल्पना करने लगता है.

मेरा यह लेख विद्यमान रहेगा और संभवतः आने वाला समय इस सचाई की पुष्टि करेगा. साथ ही यह भी बता देना चाहता हूँ कि यदि वर्तमान वैज्ञानिकों ने चन्द्रलोक तक पहुँचने का साहस किया, जिसका कि वह प्रयत्न कर रहे हैं, तो उनके शरीर घुल जाएँगे. शास्त्रों ने भी ऐसा ही कहा है कि इस शरीर को लेकर व्यक्ति वहाँ नहीं जा सकता. हाँ! उनके भाव अवश्य जा सकते हैं अथवा सूक्ष्म प्रकृति या वासना का शरीर जा सकता है और वहाँ से भी आ

सकता है.

प्रश्न - इसका कोई प्रमाण दीजिए.

उत्तर - चन्द्रलोक से आने का प्रमाण तो महाभारत में विद्यमान है. जब धर्मराज ने यज्ञ किया तो उनके पित्र चन्द्रलोक आदि से आये थे. किन्तु स्मरण रहे कि उसका कोई ठोस प्रमाण नहीं है, विश्वास की बात है. संसार ऐसी बातों को गप मानेगा. हाँ! जाने का प्रमाण मेरा अनुभव है. मैं स्वयम् जाता रहा हूँ, अब भी गया था. हमारे ऋषि भी गये थे. केवल चन्द्रलोक में ही नहीं अन्य लोकों में भी गये थे जैसा कि मैं इस लेख के आरम्भ में कह चुका हूँ.

प्रश्न- आपकी बात पर कैसे विश्वास किया जाय?

उत्तर - अनेक बार जब किसी की दुख भरी परिस्थितियों ने मेरे हृदय को हिलाया तो मैं अपने अंतर प्रविष्ट हुआ. चूंकि चन्द्रलोक स्थूल वासनाओं की सूक्ष्म शक्तियों का भण्डार है, वहाँ गया और चन्द्रमा के प्रकाश में अपनी भावना को साथ रखा. वहाँ से रेडियो के नियम के अनुसार ऊपर के लोकों से शक्ति प्राप्त की और जिस वस्तु को हाथ लगाया वह प्रभावित हुई और उससे दूसरों को लाभ हुआ. लगभग 18 स्त्रियों के बच्चे उत्पन्न हुये, अनेक रोगी स्वस्थ हुये, किन्तु जीवन का अनुभव प्रकट करता है कि जिस समय कोई कार्य होना होता है तब ध्यान उधर आकर्षित होता है, अन्यथा किसी के कहने, सुनने रोने, धोने, मिन्नत खुशामद करने से ध्यान उधर नहीं जाता. इस अनुभव से सिद्ध होता है कि 'होई है वही जो राम रचि राखा'. यहाँ आकर मुझे फेल होना पड़ा है और मैं चकित हूँ.

प्रश्न- इस बात का क्या प्रमाण है कि जो चन्द्रमा आपको अपने अन्तर दिखाई दिया, वह बाहरी चन्द्रमा का ही रूप है, कोई अन्य वस्तु नहीं?

उत्तर- अपनी उत्पत्ति पर विचार करो तुम पिता के मस्तिष्क में वीर्य के कीड़े थे. वीर्य भोजन से उत्पन्न होता है अर्थात् भोजन से रस, फिर रुधिर और तत्पश्चात् वीर्य बनता है. इच्छा के प्रभाव से माता के गर्भ में आये और बढ़ने लगे. माता ने जो भोजन किया उसका रस तुम्हारे शरीर की रचना में व्यय हुआ. अब तक शरीर भोजन के सहारे टिका है भोजन पृथ्वी से उत्पन्न होता है और पृथ्वी पर सूर्य, चन्द्र और तारागणों की धारें आकर उसके बढ़ाव में सहायता करती हैं. इससे स्पष्ट होता है कि हमारे और तुम्हारे शारीरिक, मानसिक और आत्मिक रूप की रचना में बाहरी सूर्य, चन्द्रमा और तारगणों के प्रभाव विद्यमान हैं.

वरन यों कहना उचित होगा कि हमारा शरीर, मन और आत्मा सब सूर्य मंडल की उत्पत्ति हैं. अतः हमारे शरीर, की रचना में, जिसका आधार परम तत्व का अंश है, जो कुछ भी है सब प्रकृति अथवा मौज का ही भाग है. हमारे शारीरिक जीवन के कार्य में मौज का हाथ काम करता है इसी लिए मैंने पहले कहा है कि 'होइ है वही जो राम रचि राखा.' चूँकि समस्त रचना मिली-जुली है, इसलिए जो नियम टेलीविजन में कार्य करता है वही हमारे जीवन में भी कार्य करता है और यदि साधन में एकाग्रता हो तो हम दूसरे लोकों का हाल ज्ञात कर सकते हैं.

प्रश्न- मान लिया कि चन्द्रलोक स्थूल प्रकृति की सूक्ष्म से सूक्ष्म शक्तियों अथवा वासनाओं के धुंध अथवा गैस का लोक है. अब प्रश्न यह है कि इसमें जो स्याही के धब्बे से प्रतीत होते हैं वह क्या वस्तु है?
उत्तर- स्थूल प्रकृति की वासनाओं में अच्छाई और बुराई अथवा नेकी और बदी प्रत्येक दो प्रकार के भाव विद्यमान रहते हैं. यह भाव रंग, रूप और भार रखते हैं. इसलिए काले रंग के धब्बे वास्तव में बुरी वासनाओं की भाप का समूह है.

प्रश्न- यह कोई विशेष प्रमाण नहीं, केवल अनुमान प्रतीत होता है.
उत्तर- पुराणों में उल्लेख आता है कि जब इन्द्र ऋषि पत्नी अहिल्या का सतीत्व भंग करने के लिए गया था तो चन्द्रमा ने उसकी सहायता की थी इसलिए ऋषि के श्राप से चन्द्रमा क्लंकित हो गया. यह बात सत्य है किन्तु वर्णन शैली अलंकृत है जिसको अनुभवी पुरुष ही समझ सकता है. इस बात पर ही क्या निर्भर है. पुराण कहानियों के रूप में सचाई और वास्तविकता को प्रकट करते हैं. इस प्रकार के अगणित संकेत उनमें भरे पड़े हैं. दाता दयाल महर्षि जी ने विज्ञान रामायण, विज्ञान कृष्णयन, विज्ञानबोधायन, विज्ञान वचनायन और महारामायण आदि ग्रन्थ लिखकर बहुत कुछ समझाने का प्रयत्न किया है. विशेष जानकारी के लिए इन ग्रन्थों को पढ़ देखो. वास्तविकता यह है कि जो मैंने ऊपर के उत्तर में प्रकट की हैं.

प्रश्न- बात तो ठीक मालूम होती है किन्तु बुद्धि ग्रहण नहीं करती. तो क्या वैज्ञानिकों की खोज के अनुसार वहाँ पर्वत, नदी, नहरें आदि नहीं हैं?
उत्तर- बिलकुल नहीं. बुलबुले के रूप का पदार्थ चन्द्रमा में हिलोरें मारता रहता है और

वैज्ञानिकों को निरीक्षण के समय अपने आन्तरिक विचारों के अनुसार वह विभिन्न रूपों में उसी प्रकार दृष्टिगोचर होता है जिस प्रकार बादलों में अनेक प्रकार के रूपों का भान हुआ करता है.

प्रश्न- तो क्या वहाँ जीव जन्तु आदि बिलकुल नहीं हैं?
उत्तर- हैं. किन्तु वह जीव-जन्तु सूक्ष्म शरीर वाले बुलबुले रूप के हैं.

प्रश्न- उनकी बातचीत किस ढंग से होती है? एक दूसरे पर अपने भाव किस प्रकार प्रकट करते हैं.
उत्तर- वह हमारी भाँति मुख और शब्दों का सहारा नहीं लेते. उनकी बातें उसी प्रकार भावों में परिवर्तन उत्पन्न करती हैं जिस प्रकार समाधि की दशा में अनुभव निकलते हैं.

प्रश्न- कोई उदाहरण अथवा प्रमाण दीजिये?
उत्तर- स्वप्नावस्था में मनुष्य को अपने अन्तर अगणित प्रकार के रंग और रूप दिखाई देते हैं और बातें करते हैं, यद्यपि कोई अन्य व्यक्ति न उन रूपों को देख सकता है न बातें सुन सकता है. अब सोचो यह रूप और इनकी बातचीत क्या वस्तु है? यह मनुष्य की आंतरिक इच्छाओं और वासनाओं का खेल है. इसी प्रकार और ऊपर के मानसिक और आत्मिक लोकों में हंस रहते हैं जो इसी प्रकार के रूप रखते हैं. उनकी बातचीत क्या है? केवल संकल्प से एक दूसरे के भाव को ग्रहण कर लेते हैं. संकल्प करने से ही भावनाओं और वासनाओं में परिवर्तन होता रहता है. चूँकि मानवीय अस्तित्व में समस्त ब्रह्माण्डों का प्रतिबिम्ब है, इसलिए यादि हम अपने अन्तर में एकाग्र हो जायें तो वह हमारे भीतर प्रकट हो जाते हैं.

प्रश्न : चन्द्र लोक से ऊपर जो लोक और मण्डल है क्या वहाँ भी जीव जन्तु रहते हैं?
उत्तार : हाँ! वह हंस कहलाते हैं. वहाँ मानवीय अस्तित्व के भीतर अनुभव के फव्वारे छूटते रहते हैं. प्रत्येक प्रकार के ज्ञान अथवा अनुभव की चेतनता वहाँ होती है. जो बाहर है वही हमारे अन्तर है. जब अन्तर और बाहर का विवेक जाता रहता है तो दोनों स्थानों का अनुभव भी एक हो जाता है. क्या तुम जानते हों मंगल तारे का पृथ्वी के निकट आना क्या प्रभाव दिखलायेगा? निज अनुभव के आधार पर कहता हूँ कि वह शक्ति, क्रोध और अभिमान का भण्डार है इसलिए उसके प्रभावान्तर्गत भूमण्डल के जीव जन्तुओं में भी इन भावनाओं की फुरना होगी और वह किसी न किसी रूप में अशान्ति और बेचैनी को उत्तेजित करेंगी.

मुझे प्रतीत होता है कि विषय अत्यन्त सूक्ष्म है और जो कुछ मैं कहना चाहता हूँ उसके वर्णन करने के लिए शब्द नहीं मिलते फिर भी एक बार अपने विचारों को संक्षेप में व्यक्त करके विषय को स्पष्ट करने का प्रयत्न करता हूँ.

स्थूल प्रकृति का चन्द्र लोक, स्थूल जीवन की इच्छाओं और वासनाओं का भण्डार है. इसलिए स्थूल जीवन की जितनी इच्छाएँ और वासनायें हैं इस मण्डल के प्रत्येक प्राणी और जीव जन्तु में विद्यमान हैं. रेडियो के नियम के अनुसार उनके प्रभाव इस भूमण्डल और अन्य तारागणों के जीवन पर पड़ते रहते हैं. चूंकि प्रत्येक प्रकार के स्थूल जीवन की वासनाओं के पृथक पृथक केन्द्र प्रत्येक प्राणी के शरीर में विद्यमान हैं इसलिए प्रत्येक मनुष्य विशेष प्रकार की वासनाओं के अन्तर्गत अपने शरीर में विशेष-विशेष केन्द्रों पर जानकर अथवा अनजाने एकाग्रता के द्वारा ठहरता है और उस समय वाह्य रचना से संबंधित मंडलों अथवा लोकों से शक्ति प्राप्त करता रहता है. योगी या साधक अपनी सामर्थ्य से स्वयं इस कार्य को करता है, किन्तु साधारण पुरुषों में यह कार्य अज्ञान अथवा अनजाने स्वाभाविक रूप में होता रहता है. सम्भव है किसी योगेश्वर को यह शक्ति प्राप्त हो कि वह जो चाहे वह कर सके, किन्तु मेरा निज अनुभव यह है कि यदि मौज को स्वीकार हो तो मनुष्य का चित्त उस ओर आकर्षित होता है अन्यथा नहीं.

चन्द्रलोक के परे सूक्ष्म प्रकृति के अन्य लोक या मण्डल विद्यमान है उनमें मानसिक प्रसन्नता और आनन्द का भंडार है, जिनको योग की वाणी में मानसरोवर अथवा दसवाँ द्वार कहते हैं. यों तो समस्त रचना ही वासना रूपी है, किन्तु वासना के भी विभिन्न दर्जे हैं. एक स्थूल प्रकृति की प्रसन्नताएं, दूसरे मानसिक प्रकृति की प्रसन्नताएं और तीसरे कारण प्रकृति की प्रसन्नताएं और आनन्द, इसलिये दसवाँ द्वार सुन्न, महासुन्न आदि उन चन्द्र लोकों के नाम हैं जो इस स्थूल चन्द्रलोक से आगे सूक्ष्म और कारण प्रकृति के लोक अथवा रचनाएं हैं. यह भी ध्यान रहे कि जब तक मनुष्य स्थूल प्रकृति की वासनाओं के खोलों से छुटकारा प्राप्त नहीं करता वह मानसिक चन्द्रलोक में नहीं जा सकता. चूंकि शारीरिक अथवा स्थूल शरीर साथ है, इसलिए स्थूल प्रकृति से निकलने के लिए निष्कामता का जीवन तथा साधन की आवश्यकता है. इसी दृष्टी से मैंने 'मनुष्य बनो' की पुकार की है. तात्पर्य यह है कि प्रत्येक कार्य को सोच समझ और विचार के साथ प्राकृतिक नियम के अनुसार करो, तब आगे का मार्ग खुलेगा. आगे जाने के लिये धन, स्त्री और सम्पत्ति की आसक्तियों को त्याग दो. जब

तक इन कामनाओं से छुटकारा न होगा, आगे का मार्ग न खुलेगा, हाँ न खुलेगा, बिलकुल न खुलेगा.

कभी-कभी जब वर्तमान गुरुइज्म के व्यवहार का विचार आता है तो चकित होता हूँ कि प्रकट रूप में तो गुरुजन दसवाँ द्वार और आत्मपद की शिक्षा देते हैं किन्तु स्वयं अपने अन्तर डेरा धाम बनाने और मान बड़ाई प्राप्त करने और अन्य दूसरी बातों की इच्छा रखते हैं. इसलिए शिक्षा की यह प्रणाली मेरी समझ में अब तक न आ सकी. यद्यपि यह सम्भव है कि संसार का कार्य करता हुआ मनुष्य निर्लेप रह सके, किन्तु यह कार्य अत्यन्त कठिन है. इन बातों से सांसारिक लाभ तो होता है. भूखे को रोटी, नंगे को कपड़ा, रोगी को औषधि देना भली बात है, किन्तु तवज्जह का इस ओर स्थाई झुकाव मनुष्य को मानसिक और आत्मिक प्रसन्नता से वंचित रखता है. मैं यह शब्द खण्डन के विचार से प्रयोग नहीं कर रहा, वरन् क्रियात्मक (अमली) अंग की व्याख्या कर रहा हूँ. यही कारण है कि न मैंने कोई डेरा या धाम बनाया और न कोई अन्य आडम्बर रचा. किसी सीमा तक यह ठीक है कि इनके बिना भी कार्य नहीं चलता, इसलिये इन समस्त झंझटों से बचाव का रूप केवल एक है और वह यह है कि जिस प्रकार प्रकृति की रचना के पार एक ऐसा लोक भी है जहाँ पहुँचने पर फिर मनुष्य को उन नक्षत्रों, तारागणों और ब्रह्मांडों के प्रभाव नहीं सताते और उसका केन्द्र मनुष्यरूप के मस्तिष्क में भी है. इसलिये उस ज्ञानस्वरूपी केन्द्र पर एकाग्रता प्राप्त करके ज्ञान स्वरूपी लोक अथवा देश में प्रविष्ट हो जाओ. उस देश का नाम है सतगुरु का देश.

प्रश्न : क्या सचमुच वह भी कोई देश या लोक है?
उत्तार : हाँ, हाँ हाँ, हाँ, उस देश में है कुल आलम पिनहाँ. वहाँ जो गया लामुहीत हुआ, लाहमहदूद हुआ और लामकाँ.

वह बेअन्त बेपार बेकिनार है नहीं कोई नामो न निशां
वह ज़ात परमतत्व, अनुभव से देख रहा हूँ अपना मकाँ
उससे निकल धार प्रकटी, आतम परमातम के नामो निशां
यह कारन, सूक्ष्म और स्थूल, प्रकृति है बुलबुलये समाँ
हम आये हैं उस देश से, धार कर तन इन्साँ
वह देश हमारा है, लाजवाल व लाजमाँ
आदि जुगादि हम में रहते, प्रकृति है सब नाशवान

दाता सतगुरु ने भेद बताया, पाकर हुए हैं इन्सान

आकाशीय रचना

लेख नं. 2

छोड़ कर वजूदी हालत अब हूँ आसमानी बन रहा
मकानियत जिस्म दिल और रूह थे, अब लामकानी बन रहा
मेरे घर में है जीस्त, फ़नायत का निशां नहीं
आया था कहने को कुछ कह कर लाफानी हो रहा
ऐ नस्ले इंसा! तुझको देता हूँ तेरा अपना ही पता
जब तू था अकेला खुद ही था, अब तू दवामी हो रहा
आप अपनी ज़ात में, इंसान था खुद ही मुहीम
आप फैला आप में, खुद बामकानी हो रहा
करिश्मे हैं अज़ल ता अबद, फ़क़त तेरी ज़ात के
मुनकसम होकर के ख़ुद ही, शक्ले इंसाँ हो रहा
तेरा मस्कन है जिस्म दिल और रूह से भी परे
अपनी मर्जी से तू ख़ुद ही, सूरते इंसाँ हो रहा

किन्तु तू उसको या अपने आपको न समझेगा. कैसे समझाऊँ. विवश होकर आकाशीय बन कर मध्यदृष्टि रख कर आकाशीय रचना का वर्णन करता हूँ. आकाशीय जगत क्या है? मानव बुद्धि यह विचार करती है कि आकाश केवल शून्य है किन्तु यह बात वास्तविकता से कोसों दूर है. रचना में कोई स्थान ऐसा नहीं है जहाँ कुछ न हो. यह दूसरी बात है कि बाह्यदृष्टि से हम उसे न देख सकें. रचना में किसी स्थान पर स्थूल प्रकृति है कहीं सूक्ष्म और कहीं कारण. स्थूल प्रकृति की रचना मानवीय जगत कहलाता है. मानसिक अथवा सूक्ष्मप्रकृति की रचना ब्रह्म का जगत कहलाती है और कारण प्रकृति की रचना अथवा अवस्था आत्मिक जगत कहलाता है. मनुष्य शरीर में भी इसी प्रकार तीनों के भीतर रहती हुई इनके खेल अथवा बोध-भान का अनुभव करती है वह मनुष्य की ज़ात या निज स्वरूप है. हे मानव! यदि तू चाहे तो स्वयं ही शरीर में रहता हुआ अपने मानसिक और आत्मिक जगत की सैर कर सकता है और इच्छा होने पर अपने स्वरूप में लय होकर व्यक्तित्व को खो सकता है. चूंकि

तेरी देह, मन और आत्मा जो कि मिश्रित वस्तु हैं और इस सृष्टि के विभिन्न प्रकार के परमाणुओं से बनी हुई है, इसलिये इच्छा करने पर तू स्वयं अपने शरीर की प्रकृति के अनुसार सृष्टि में सर्वव्यापी प्रकृति का अनुभव कर सकता है, देख सकता है और उसको अपने अनुकूल बनाकर जीवन को सुखी बना सकता है. किन्तु स्मरण रहे, जिस प्रकार की प्रकृति का अंश तेरे देह मन और आत्मा में नहीं है तू प्रकृति के उन देशों अथवा मंडलों का अनुभव नहीं कर सकता.

स्थूल प्रकृति अथवा दृश्यमान जगत- प्रत्येक अस्तित्व की बनावट तरतीब और युक्ति इस सौर मंडल के नियम के अधीन है। सूर्य चन्द्र, नक्षत्र और तारागण स्थूल प्रकृति के विभिन्न अंगों के केन्द्र अथवा भंडार हैं उनसे जो धारें अथवा किरणें निकलती रहती हैं वह दृश्यमान जगत में विभिन्न प्रकार के अस्तित्वों की रचना करती रहती हैं और समय आने पर उन अस्तित्वों को तोड़ती रहती हैं, उदाहरणार्थ समझो. सूर्य गर्मी अथवा प्राण का भण्डार है. वृहस्पति विवेक शक्ति का केन्द्र है. शुक्र वीर्य का केन्द्र है. मंगल शक्ति का भण्डार है और शनि और राहू स्थूल शरीर को वश या कंट्रोल में करने की शक्ति के भण्डार हैं.

सूर्य मंगल से संबंधित समस्त मंडल केन्द्र, लोक अथवा शक्ति के केन्द्रों के संचालन का प्रभाव उस सूर्य मंडल में रहने वाले अस्तित्व पर अवश्य होता है चाहे वह मनुष्य हो, पशु हो, अथवा वनस्पति हो. यही कारण है कि प्राचीन ऋषियों ने अपने अनुभव के आधार पर वर्णन किया कि विभिन्न देवता इस स्थूल रचना अथवा सृष्टि के रचने, पालन करने और संहार करने वाले हैं और सम्भव है इसी विचार के अन्तर्गत हिन्दुओं में नवग्रह पूजन का रिवाज़ पड़ा हो.

मानवीय स्वभाव पूर्णज्ञान न होने के कारण आश्रय चाहता है. वह धार्मिक विचार अथवा अन्य बाह्य प्रभावों के अन्तर्गत मान लेता है कि अमुक शक्ति अथवा अस्तित्व शक्तिशाली है और उसका आश्रय अथवा सहायता मेरे जीवन के बोझ को हलका कर सकता है. इस आश्रय चाहने की इच्छा और उसकी प्राप्ति के प्रयत्न का नाम ही पूजा है, जिसका संबंध हिन्दुओं के कर्मकाण्ड से है और यह कर्मकाण्ड मनुष्य की विवेक शक्ति का स्थूल रूप है. इन दशाओं में मैं विचार करता हूँ कि जिस समय जिन ऋषियों, महात्माओं अथवा कर्मकाण्डी पथप्रदर्शकों ने नवग्रह पूजा अथवा अन्य प्रकार की पूजा का आरम्भ किया, उस दशा में उसको मनुष्य की विवेक शक्ति अथवा मानसिक और आत्मिक जगत का पूर्ण ज्ञान नहीं था.

प्रश्न : क्या स्थूल प्रकृति के केन्द्रों या मण्डलों अथवा दूसरे शब्दों में नवग्रहों और देवताओं की पूजा से मनुष्य को कुछ लाभ भी हो सकता है?
उत्तर : हाँ, किसी सीमा तक लाभ हो सकता है.

प्रश्न : वह किस प्रकार?
उत्तर : मानसिक शक्ति की एकाग्रता की दशा में. इस एकाग्रता को प्राप्त करने के लिये जाप का आश्रय लिया जाता है. जाप के शब्द चाहे कुछ भी हों, वास्तविक वस्तु जो लाभ पहुँचाती है वह एकाग्रता है, यद्यपि ऋषियों ने विशेष-विशेष प्रकार के जाप में विशेष-विशेष प्रकार का संकल्प दिया हुआ है और वह संकल्प और उस पर लाया हुआ विश्वास अपना कार्य करता है.

प्रश्न : आपकी बातें से सिद्ध होता है कि सूर्य मण्डल के लोकों और मण्डलों के प्रभावों पर मनुष्यों की मानसिक एकाग्रता प्रभावान्वित हो सकती है?
उत्तर : ठीक है और वह भी एकाग्रता की मात्रा के अनुसार.

प्रश्न : इससे तो सिद्ध होता है कि मन के अस्तित्व की शक्ति सौरमण्डल से बढ़ कर है?
उत्तर : हाँ! सौरमण्डल का संबंध दृश्यमान जगत से है और मानसिक एकाग्रता दृश्यमान जगत में परिवर्तन ला सकती है.

प्रश्न : कोई प्रमाण दीजिए?
उत्तर : हिन्दू शास्त्रों में उल्लेख आता है कि ब्रह्मा इस जगत या सौर मण्डल की रचना करते हैं, विष्णु पालन करते हैं और शिव संहार करते अथवा परिवर्तन लाते रहते हैं. यह तीनों देवता अथवा प्राकृतिक शक्तियाँ सूक्ष्म प्रकृति की हैं और स्थूल प्रकृति मण्डल अथवा लोक हैं जिनको ब्रह्मलोक, विष्णु लोक और शिवलोक कहते हैं. और वह सूक्ष्म प्रकृति से बने हुए हैं. उनसे शक्ति अथवा धरें निकल-निकल कर स्थूलप्रकृति में परिवर्तन उत्पन्न करती रहती हैं. अर्थात् पालन, पोषण और संहार का क्रम चलता रहता है और उनका प्रतिबिम्ब न्यून और अधिक प्रत्येक शरीर में विद्यमान है. इसलिए यदि कोई प्राणी किसी इच्छा अथवा वासना के अन्तर्गत उनके केन्द्रों पर अपने अन्तर एकाग्रता प्राप्त कर ले तो रेडियो के नियम के अनुसार ऊपर के सूक्ष्म लोकों से प्रभावान्वित होकर अपने शारीरिक जीवन में परिवर्तन ला

सकता है. यही कारण है कि प्राचीन ऋषियों ने और अधिक अनुभव प्राप्त करने के पश्चात् कर्मकाण्ड के अतिरिक्त विष्णुपूजा और शिव पूजा आदि को प्रचलित किया.

प्रश्न : क्या विष्णु लोक, शिवलोक आदि का कोई रंग और रूप भी है?
उत्तर : हाँ! विष्णुलोक का रंग दूध की भांति श्वेत है, उसमें स्थूल प्रकृति की सूक्ष्मतर शक्ति द्रव रूप में लहरें मारती रहती हैं. वहाँ से वह अपनी शक्ति सौर मंडल और उसकी रचना को देता रहता है. चूंकि प्रारम्भिक आयु में मैंने विष्णु की पूजा की है, इसलिए मुझे अनुभव है और शास्त्र भी ऐसा ही कहते हैं. किन्तु उनका कहना अलंकार की भाषा में है, जो अनुभव से समझ में आ सकता है. कहा है कि विष्णु भगवान क्षीर सागर में शेषनाग की सेज पर लक्ष्मी के साथ विराजमान रहते हैं और सौर मण्डल का प्रबंध करते रहते हैं. हमारे शरीर में विष्णु जठराग्नि के रूप में पेट में विराजमान हैं और जीवन के ठहराव का आधार पेट ही है. इसी प्रकार समस्त देवताओं की शक्ति प्रत्येक प्राणी के शरीर के विभिन्न अंगों में रहती है और अपना-अपना कार्य करती है.

प्रश्न : क्या विष्णु, शिव अथवा अन्य शक्तियाँ अथवा देवता इस रचना में एक-एक ही हैं या अनेक हैं?
उत्तर : इस सौर जगत के ब्रह्मा, विष्णु और शिव एक-एक हैं किन्तु अनुभव के आधार पर कहता हूँ कि पता नहीं कि कितने सौर जगत इस रचना में हैं और प्रत्येक सौर जगत के पृथक-पृथक ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि हैं. दूसरे शब्दों में अनेक सौर जगतों की शक्तियों के अनेक मण्डल अथवा लोक होना आवश्यक हैं. क्या पता सन्तों ने इसी अनुभव के आधार पर अपनी वाणी में लाखों ब्रह्मा और लाखों विष्णु और लाखों शिव आदि का उल्लेख किया है. मित्र! ब्रह्मा, विष्णु और शिव का क्या उल्लेख है, मैं तो ब्रह्म भी अनेक मानता हूँ. शास्त्र और सन्त इसका प्रमाण देते हैं. कबीर साहब ने अनेक स्थलों पर अपने शब्दों में 5 ब्रह्म का उल्लेख किया है.

मैंने स्वयं इस समस्त रचना अथवा मानसिक जगत की सैर की है और अपने अनुभव के आधार पर यह समझता हूँ कि सूक्ष्म और स्थूल प्रकृति एक महान, महान, महान अनन्त समुद्र की दशा रखती हुई अनेक प्रकार की और असीम रचना का कारण है. सूक्ष्म प्रकृति के अनेक मण्डल और लोक हैं. उनमें अनेक प्रकार की शक्तियाँ अथवा चेतनाएँ विद्यमान हैं जो स्थूल प्रकृति पर प्रभावित हो होकर इसमें परिवर्तन लाती रहती हैं.

इस अनुभव अथवा निज अनुभव के आधार पर शास्त्रों की शिक्षा के सहारे पर कहता हूँ कि स्थूल प्रकृति अथवा देवताओं के विभिन्न प्रकार के प्रभावों में परिवर्तन करने के लिए यदि मानसिक शक्ति को श्रेष्ठतर बना लिया जाय तो अधिक सीमा तक हमारे दृश्यमान जीवन में परिवर्तन आ सकता है और हम सांसारिक जीवन में प्रसन्न रह सकते हैं. क्या आश्चर्य वेदों में इसी विचार से 'शिव संकल्पमस्तु' अर्थात 'सदैव विचार और भाव शुद्ध रखो' के महामन्त्र को स्थान दिया गया है.

कर्मकाण्ड के चक्र के पश्चात् मानसिक योग विद्या का युग आया. उस समय पर उस वर्तमान और भूतकाल को दृष्टि में रखते हुए ऋषियों ने मन की एकाग्रता पर बल दिया, जिसका एक अंग सुमिरन और ध्यान है, किन्तु एकाग्रता की भी विभिन्न श्रेणियाँ हैं. उक्त वर्णन से स्पष्ट है कि इस सौर जगत अथवा स्थूल प्राकृतिक जगत के परे मानसिक सूक्ष्म प्रकृति का विशाल जगत है. अब उसका वर्णन सुनो.

मानसिक अथवा सूक्ष्म प्रकृति का जगत : मेरा निज अनुभव, शास्त्रों का कथन और संतों और फकीरों की वाणी इस बात के साक्षी हैं, यद्यपि नवीन युग के प्राणी इन बातों को गप मानते हैं. वर्तमान स्थूल प्रकृति की रचना के परे एक महान और सूक्ष्म प्रकृति की रचना है जो स्थूल रचना का आधार है और अपनी बारी पर वह सूक्ष्म प्रकृति की रचना कारण प्रकृति की रचना से बनती है. कारण प्रकृति की रचना का भी एक अपरिमित विशाल देश है और प्रत्येक शरीर, चाहे वह मनुष्य हो, पशु या कोई अन्य जो भी प्रकृति से बना है, वह किसी अस्तित्व से बनता है अथवा प्रकट होता है. शून्य में से कुछ नहीं निकल सकता अनास्तित्व से अस्तित्व नहीं निकल सकता. इस समस्त रचना का आधार कोई न कोई अस्तित्व है. जिसके सहारे यह कारण, सूक्ष्म और स्थूल रचना प्रकट होती है, स्थित रहती और नाश को प्राप्त होती रहती है. जैसे भाप से पानी और बर्फ प्राकट्य में आकर अपने अस्तित्व का तमाशा दिखाते हुए पुनः भाप का रूप धारण कर लेते हैं और इस समस्त खेल का आधार कोई अस्तित्व है, मगर वह इस विषय से संबंधित नहीं है. वैज्ञानिक भी मानते हैं कि हमारी वर्तमान पृथ्वी किसी समय सूर्य का एक अंश अथवा अंग थी. वह उत्पत्ति (evolution) के नियम के अन्तर्गत वर्तमान रूप में दिखाई दी. ठीक इसी प्रकार मानसिक रचना या जगत परिवर्तन के नियम के अन्तर्गत स्थूल जगत के रूप में दिखाई देती है. सूर्य अपने सौर मंडल में स्वयं पृथ्वी व अन्य लोकों और मण्डलों के दूसरे स्थूल रूप में विद्यमान है. इसी प्रकार

सूक्ष्म प्रकृति परिवर्तन के नियमान्तर्गत स्थूल प्रकृति में व्यक्त होती रहती है और अपने-अपने लोकों अथवा मंडलों में व्यक्तिगत रूप से भी विद्यमान रहती है. जिस प्रकार हमारे सौर मण्डल का आधार दृश्यमान सूर्य है उसी प्रकार मानसिक अथवा सूक्ष्म प्रकृति का भी एक सूक्ष्म सूर्य है जिसका नाम संतों की वाणी में सोहं पुरुष है, जिसका प्रतिबिम्ब हमारे भीतर हमारी आत्मा है. आत्मा प्रत्येक अस्तित्व में विद्यमान है और समस्त दृश्यमान खेल उसी के आसरे होता है. जो प्राणी आत्मविश्वासी होते हैं और अपने अन्तर आत्मिक एकाग्रता के साधक होते हैं वह इच्छा से अपनी शारीरिक और मानसिक अवस्था को अनुकूल बनाते हुए सांसारिक अथवा शारीरिक जीवन में प्रसन्न और सुखी रह सकते हैं. किस प्रकार? एकाग्रता की अवस्था में अपनी वासना के अनुसार आत्मा का संबंध ऊपर के लोकों से हो जाता है और वहाँ से रेडियो के नियम के अनुसार अनुकूल और लाभकारक शक्ति को अपने अन्तर में ला सकते हैं. सम्भवतः यही कारण था कि ऋषियों और महात्माओं ने सब प्रकार के जापों से असली और श्रेष्ठतर जाप सोहं पुरुष का बताया, यद्यपि यह मेरा अनुमान है.

संक्षेप में फिर समझ लो. हमारे शारीरिक जीवन का आधार हमारे प्राण हैं. मानसिक जगत का स्रोत आत्मा है. स्थूल प्रकृति का आधार सूर्य है और सूक्ष्म प्रकृति का आधार सोहं पुरुष है. इसलिए हम अपने अन्तर में विभिन्न केन्द्रों पर एकाग्र होकर ऊपर के विभिन्न लोकों से रेडियो के नियमानुसार शक्ति प्राप्त करके शारीरिक और मानसिक उन्नति कर सकते हैं, किन्तु स्मरण रहे केवल उन बोध-भान में, जो हमारी शारीरिक बनावट में विद्यमान हैं, जो प्रकृति हमारे शरीरिक कोष में नहीं है वह विकसित नहीं हो सकती, उदाहरणार्थ जन्म से अंधा व्यक्ति देखने की और जन्म से बहरा व्यक्ति सुनने की शक्ति प्राप्त न कर सकेगा.

प्रश्न : इससे तो यह सिद्ध होता है कि मौज अथवा क्षोभ के क्रम में जिस शरीर की रचना में जिस प्रकार की प्रकृति मिली हुई है वह उसी के अनुसार अपनी शक्ति को विकसित कर सकता है.
उत्तर : आपका विचार ठीक है और मैं भी कहने के लिए विवश हूँ कि :

कुछ करनी कुछ करम गति, कछुक पूरब ले लेख
देखो भाग कबीर का, लख से भया अलेख
होगा वही जो राम रचि राखा
को करि तर्क बढ़ावै साखा

किन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि मनुष्य भाग्य पर संतोषी होकर अपाहिज बन जाये. एकाग्रता के नियम को समझ कर अपनी-अपनी प्रकृति के अनुसार चले चलो. समय आने पर प्रत्येक व्यक्ति सोहं पुरुष अथवा आत्मपद तक पहुंच सकता है. यद्यपि मार्ग भिन्न-भिन्न होंगे और अनुभवों में भी विभिन्नता होगी, किन्तु परिणाम एक अर्थात् आत्मपद की प्राप्ति होगी, क्योंकि शारीरिक और मानसिक रचना का आधार वही है.

प्रश्न : क्या सूक्ष्म प्रकृति के लोकों अथवा मंडलों में भी प्रकाश, सृष्टि, भार और लम्बाई-चौड़ाई की गणना है?
उत्तर : हाँ! प्रकृति चाहे स्थूल हो, सूक्ष्म अथवा कारण सब एक प्रकार के पदार्थ हैं. पदार्थ रंग, रूप और भार रखता है. रूप बदलता रहता है. तुम देखते हो कि पृथ्वी से जल अधिक विस्तृत है, जल से वायु और अधिक विस्तृत है और वायु से भी अधिक विस्तृत आकाश है. यह स्थूल प्रकृति की दशा है. अब सूक्ष्म अथवा मानसिक रचना का अनुभव करो. प्रत्येक मानसिक रचना का लोक अथवा मंडल असीमित है. उनके रंग, रूप और रचना पृथक-पृथक हैं और स्थूल प्रकृति सूक्ष्म प्रकृति से उत्पन्न होती है. इसलिए सूक्ष्म के मंडल अथवा लोकों की लम्बाई-चौड़ाई और प्रभाव कितने विस्तृत होंगे, अनुमान करके देखो और चूंकि रचना चाहे स्थूल हो, सूक्ष्म हो अथवा कारण हो प्रतिक्षण हरकत या गति में रहती है, इसलिए गति से ध्वनि का निकलते रहना आवश्यक है. यह दूसरी बात है कि वह हमें सुनाई दे अथवा न दे. मेरे कार्यालय में मोटर चलती है. आवाज (ध्वनि) उत्पन्न होती है. पृथ्वी की चाल से भी आवाज़ होती है, यद्यपि हम उसको सुन नहीं सकते.

समस्त रचना अथवा सृष्टि में आवाज़ और प्रकाश प्रत्येक स्थान पर विद्यमान है. यही कारण है कि हमारे देश के ऋषियों ने कर्मकाण्ड के पश्चात् प्राणायाम मंत्र की रचना की और आदेश दिया कि अपने अन्तर में ओउम भू, भुवः, स्वः, महः जनः और तपः लोकों के पार जो सावित्री अथवा महान् प्रकाशवान सूर्य है उसका ध्यान करो. वह सूर्य क्या है? तुम्हारे अपने अन्तर में तुम्हारा अपना आत्म स्वरूप है और बाह्य रचना में सोहं पुरुष का लोक है. आत्मपद में रहने वाला मनुष्य अपनी शारीरिक और मानसिक प्रकृति को अनुकूल बनाकर प्रसन्न चित्त रह सकता है और शुभ संकल्प से संसार का भी भला कर सकता है.

किन्तु स्मरण रहे कि आत्मपद का वासी अपने व्यक्तित्व को नहीं खो सकता. उसका

व्यक्तिगत रूप स्थूल और मानसिक रचना में किसी न किसी रूप में सदैव स्थित रहेगा. आत्मा दो शब्दों से बना हुआ है. अत् का अर्थ संचालन और मनन का अर्थ है सोचना. आत्मा का गुण सोचना और संचालन करना है इसलिए वह प्रकृति के चक्कर से नहीं निकल सकता अथवा व्यक्तित्व को खोकर अमरपद में नहीं आ सकता.

प्रश्न : क्या आपकी वाणी का यह अर्थ है कि सोहं पुरुष के निवासी अथवा आत्मपद में स्थित आवागमन से नहीं निकल सकते?

उत्तर : मैं कुछ नहीं कह सकता, किन्तु मेरा अनुभव यह है कि जब तक जीवन व्यक्तिगत रूप में है वह पूर्ण का उत्तराधिकारी कैसे हो सकता है. यदि वह जीवन सत का अंग हो जाता है, कोई दुख-संकट नहीं हो सकता. किन्तु जब तक व्यक्तित्व को खोता नहीं, उसकी व्यक्तिगत स्थिति किसी न किसी रूप में विद्यमान रहेगी.

आत्मपद में 16 प्रकार की चेतनाएं रहती हैं. वह महान आनन्द की अवस्था है, किन्तु होने का भान उसमें विद्यमान है. व्यक्तित्व विद्यमान रहता है. इस अनुभव के आधार पर सन्तों और पूर्ण पुरुषों ने अद्वैत अथवा आत्मपद अथवा वेदान्त को भी लक्ष्य या पूर्ण नहीं बताया समस्त पुरुष अथवा प्रत्येक जीवन अस्तित्व के बंधन के रूप से पृथक-पृथक है. जहाँ से यह व्यक्तित्व अथवा समस्त आत्मपद प्रकट होते हैं. उसका नाम सत् रखा हुआ है. जब मनुष्य अपने व्यक्तित्व को खो देता है, अस्तित्व का बोध समाप्त हो जाता है, तो वह एक ऐसी अवस्था का अनुभव करता है जहाँ परमतत्व स्वयं अपने आप में रहता है. मैं, तू, यह, वह का प्रश्न समाप्त हो जाता है. संकेत समझो और बस.

न वहाँ एक है, न दो है, न तीन और चार
वहाँ तत्व महान है, जो कि है सर्वाधार
न गुरू कोई, न चेतनता है, नहीं कोई विचार
बेअन्त अपार है, वह कहन सुनन से न्यार
न आदि है न अन्त, न वार है, वह है पार
चेतनाएं खतम हुई, वह आप है सबका आधार

प्रश्न : कोई प्रमाण?

उत्तर : सबूत कोई है नहीं क्या सबूत दूँ, हो गया लाचार.
अनुभव सम्पन्न बात हो जो, कहन सुनने से हूँ लाचार.

फिर भी इतना समझो बिजली के स्रोत से धार निकली, अपने ठिकाने पर पहुंच कर लौटी और पुनः स्रोत में जाकर समा गई और बिजली हो गई. और बस.

आकाशीय रचना (लगातार)

लेख नं. 3

बहुत समय व्यतीत हुआ जब आकाशीय रचना का विचार दाता दयाल महर्षि जी महाराज ने मुझे दिया था, क्योंकि मैं उस समय दुखी, अशान्त और भ्रम में था. सुख स्वतन्त्रता में है. बंधन में सुख कहाँ? वह बंधन क्या थे? शरीर, मन और आत्मा के कारागृह के बंधन थे. जीवन उन्नतिशील है. देशाटन और जानकारी या ज्ञान में वृद्धि मानवीय जीवन की विशेषता है. बालक को देखो. ज्यों-ज्यों बढ़ता है देशाटन और ज्ञान का भाव भी उन्नति करता जाता है. माता-पिता को देखभाल करनी पड़ती है. शारीरिक जीवन सांसारिक देशाटन का शौकीन है. उसमें ज्ञान, सम्पत्ति और आवश्यक वस्तुओं की आवश्यकता होती है, किन्तु आकाशीय देशाटन के लिए, जिसका संबंध मानसिक जगत से है, इनमें से किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं है. केवल तवज्जह की एकाग्रता की आवश्यकता है. जिस प्रकार सांसारिक देशाटन में सामग्री की न्यूनता बाधक होती है उसी भांति आकाशीय देशाटन में वासना रूपी माया बाधा उपस्थित करती रहती है.

प्रश्न : वह कैसे? अर्थात आन्तरिक दृश्य का आनन्द उठाने के लिए मानव का व्यवहार कैसा होना चाहिए?

उत्तर : मैं पहले बता चुका हूँ कि मानव शरीर देह, मन और आत्मा से मिलकर बना है और इनके ऊपर एक वस्तु और है, जल, अग्नि, आकाश और हवा आदि तत्वों का मेल होता है. वर्तमान विज्ञान भी मानता है कि हमारे शरीर की रचना में प्रकृति के विभिन्न प्रकार के अंशों का मिश्रण है. इसी प्रकार मानसिक रचना में भी बुद्धि, विवेक, विचार और ज्ञानेन्द्रियाँ आदि विभिन्न अंश विद्यमान हैं. आत्मा में अत् (हिलना-डोलना) और मनन (अनुभव) रहता है. प्रत्येक देह, मन और आत्मा प्रकृति के जिन अंशों से बनते हैं वह बाहर से आकर प्रत्येक अस्तित्व को बनाते और बिगाड़ते रहते हैं. इससे प्रकट होता है कि प्रत्येक प्रकार की प्रकृति के भंडार बाह्य रचना में विद्यमान हैं और उनका प्रतिबिम्ब प्रत्येक मानवीय शरीर में भी है. इसलिए मनुष्य इच्छा करने पर भी अपने अन्तर जिस प्रकार के मंडल पर एकाग्र होता है

रेडियो के नियमानुसार उसके ध्यान का संबंध बाह्य रचना से संबंधित भंडार से हो जाता है. वह वहाँ के प्रभावान्तर्गत आनन्द, प्रसन्नता और ज्ञान आदि के भावों में उन्नति कर जाता है. इससे विदित हुआ कि आकाशीय देशाटन के लिये केवल एक वस्तु की आवश्यकता है. वह क्या? इच्छा के अन्तर्गत इच्छा से संबंधित केन्द्र पर मन की एकाग्रता.

आज का जगत मेरी बात पर विश्वास न करेगा, किन्तु यह सचाई है कि सुरत और वस्तु है और देह, मन और आत्मा और वस्तुएँ हैं. शरीर मन और आत्मा मिश्रित वस्तु है किन्तु सुरत अमिश्रित वस्तु है. देह विभिन्न प्रकार की स्थूल प्रकृति के अंशों का मिश्रण है, मन संकल्प विकल्प का रूप है और आत्मा आनन्द का भण्डार है. सुरत का अनुभव केवल उस व्यक्ति को सकता है जो इस प्रकार की गहरी समाधि का अनुभव रखता है जिसमें प्रत्येक प्रकार के शारीरिक बोध-भान, मानसिक विचार और आत्मिक आनन्द लय हो जाते हैं. इसीलिये संतों ने कहा है-

क्षर अक्षर निःअक्षर पारा। विनती करे जहाँ दास तुम्हारा।

'क्षर' स्थूल प्रह्मति का नाम है, 'अक्षर' सूक्ष्म प्रकृति और 'निःक्षर' कारण प्रकृति का नाम है प्रत्येक रचना की प्रकृति के लोक अथवा मंडल पृथक-पृथक हैं बाह्य रचना में भी और मनुष्य के अपने भीतर भी.

एक दृष्टि से सुरत या तवज्जह के लिये लोक-लोकान्तर देशाटनीय क्षेत्र है. वह तत्व स्वयं उन लोकों में आकर सैर करता है और जब इस खेल से उकता जाता है तो अपने आप में वापिस चला जाता है. दूसरे शब्दों में उत्पत्ति और प्रलय का खेल अथवा आकाशीय जगत सुरत का देशाटनीय क्षेत्र है. सुरत के दृष्टिकोण से हम सब परमतत्व, सर्वाधार परमपद या मालिक के अंश हैं और उसके खेल के क्रम में रचना में आते-जाते रहते हैं. प्राकृतिक खेल में कोई दुख नहीं है किन्तु अज्ञान और भ्रम के कारण हम इन त्रिगुणात्मक लोकों में आकर दुख-सुख, पाप-पुण्य, बुराई-भलाई आदि के भ्रमों में फँस जाते हैं और अपने ही विचार से धर्म, पंथ, सम्प्रदाय आदि के और 'मैं'-'तू' के झमेले उत्पन्न करके अशांत होते रहते हैं. जब घबरा जाते हैं, साधन और सत्संग का आश्रय लेते हैं और इस क्रम में जब अपने आपका रहस्य अथवा भेद मिल जाता है तो जीवन, जिसका आधार वासना या इच्छा होती है, अनिच्छा में परिवर्तित होकर समाप्त हो जाता है. शेष क्या रह जाता है? केवल ज़ात, निजस्व रूप, परमतत्व.

लब खुले और बन्द हुए. यह राज जिन्दगानी है

मौज अनादि प्रतीत होती है उसी के क्रम में लोक-लोकान्तर, देश और देशान्तर बनते और बिगड़ते रहते हैं, किन्तु स्मरण रहे कि लोक और मंडल अनादि नहीं हैं. इनमें सदैव परिवर्तन होता रहता है और समय आने पर बनते और बिगड़ते रहते हैं. प्रत्येक अस्तित्व चाहे वह कोई क्यों न हो जो बनेगा वह बिगड़ेगा, यह प्राकृतिक नियम है. इसलिये जीवन भर की दौड़ धूप के पश्चात् जो अनुभव प्राप्त हुआ उसके आधार पर कहता हूँ कि -

ज़ात अपनी आधार अपने का, रखकर ख्याल अपने आप में.
खूब खेलो, सैर कर लो, जिन्दगी के मिलाप में
हम आये हैं खेलने, और सैर करने के लिये
हम नहीं आये रोने धोने, और रहने विलाप में
मौज ने दुनिया रचाई, और बनाये लोक लोकान्तर
जिस कुरे में तुम हो रहते, रहो मेल और मिलाप में
दृश्य देखो सैर कर लो, जिन्दगी खुशी से हो बसर
बात आई यह समझ में, आसमानी दुनिया के मिलाप में
दाता ने दया की, अनुभव सम्पन्न है कर दिया
बता रहे हैं निज अनुभव, टूटे फूटे अलाप में
बस एक जात की भक्ति का, लो सहारा दोस्तो
जिन्दगी गुजारो उसी के, भजन ध्यान और जाप में
इंसानी दिल के सहारे हैं, ध्यान और सुमिरन भजन
राज़ असली समझ में आता है, किसी कामिल की बात में
इंसान कामिल समझता है, किस तरह होगा तुम्हारा भला
उसके हुक्म को मानना ही, है इबादत हर बात में

हमारे अपने ही बोध-भान की सैर का नाम आकाशीय जगत है. जो कुछ ब्रह्मांड में है वह सब छोटे रूप में हमारे पिंड (शरीर) में भी है. पिंडे सो ब्रह्माण्डे. आवश्यकता मन की एकाग्रता की है. यदि हम अपने अन्तर में एकाग्रता से कार्य लें तो ऊपर के लोकों का अनुभव हो सकता है, जो अनुभव अब से सहस्रों वर्ष पूर्व हमारे ऋषियों को हुआ होगा. इस समय जो

व्यक्ति ऊपर के लोकों की सैर करेगा वह अनुभव ज्यों का त्यों न हो सकेगा, क्योंकि काल अथवा समय के परिवर्तन के साथ-साथ प्रत्येक मंडल अथवा लोक में परिवर्तन आता रहता है. उदाहरण रूप में क्या पंजाब, क्या भारतवर्ष अथवा संसार के किसी अन्य देश की इस समय वही दशा है जो सहस्र वर्ष पूर्व थी. रचना में कोई मण्डल लोक, देश अथवा व्याक्तित्व ऐसा नहीं है जो परिवर्तनशील न हो. हाँ! यदि कोई वस्तु परिवर्तन के नियम से बाहर है तो वह केवल सुरत का भंडार है अथवा ज़ात है.

आकाशीय रचना

लेख नं. 4

आकाशीय रचना के विषय पर यह चौथा लेख है. प्रश्न किया जा सकता है कि इसके लिखने का कारण क्या है? इसका कारण है कर्म भोग या मौज. प्रकृति ने जिसको जिस काम के लिये योग्य समझा है वह उस कार्य करने को विवश है. मौज का अर्थ क्या है? मौज सत् (हस्ती) में क्षोभ का होना अथवा सूक्ष्म, स्थूल और कारण प्रकृति की किरणों के खेल का नाम है. इसके खेल के सिलसिले में रचना होती रहती है और बिगड़ती रहती है. रचना में हर प्रकार की कारण प्रकृति अपना अलग-अलग मंडल या भण्डार रखती है. उसके भंडार से इस प्रकृति के गुण और प्रभाव धारों के रूप में निकलते रहते हैं. वह धारें दूसरी धारों के साथ मिल कर अनेक प्रकार के जीव बनाती रहती है तात्पर्य कि जो कुछ रचना में हो रहा है वह सब का सब मौज आधीन है. गुरु नानक साहब का कथन है-

करे करावे आप ही आप, मानुष के कछु नाहीं हाथ

तुलसीदास जी ने भी कहा है-

होइ हैं वही जो राम रचि राखा, को करि तर्क बढ़ावे साखा

मौज या प्रकृति के खेल में लाखों प्रकार के नक्षत्र, तारागण, लोक-लोकान्तर प्रगट होते हैं. पूर्ण पुरुषों ने इनकी सैर की, मगर वह सैर विज्ञान या अनुभव की दृष्टि से की. विज्ञान या अनुभव सदा किसी वस्तु को देखकर, छूकर और सुनकर होता है. अनुभव तीन प्रकार का है स्थूल प्रकृति का, सूक्ष्म प्रकृति का और कारण प्रकृति का. पहली का संबंध बाह्य रचना से है अर्थात् स्थूल प्रकृति का अनुभव बाहरी रचना से होता है और शेष दोनों का अनुभव अपने

अन्तर में तवज्जह को एकाग्र करने से होता है. इसलिये इनका संबंध अन्तरीय रचना से है. हर एक नक्षत्र और तारा अपने केन्द्र के चारों ओर जहाँ से उसका प्रारम्भ हुआ है घूमता रहता है और यह इनका प्राकृतिक कर्म इस प्रकार का है जिस प्रकार छाया अपने असल के सहारे रहती है. स्थूल प्रकृति की पैदावार या समस्त लोक-लोकान्तर, सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र आदि का सौर मण्डल अपने स्रोत ज्योति स्वरूप के चारों ओर चक्कर लगाता रहता है. अपनी बारी पर स्थूल प्रकृति का भण्डार आदि ज्योति स्वरूप अपने समस्त परिवार या सूक्ष्म प्रकृति से प्राकट्य में आये हुये नक्षत्र और तारागणों के साथ आदि सूक्ष्म प्रकृति के स्रोत सोहंग पुरुष के चारों ओर चक्कर लगाता रहता है. इसी तरह अपनी बारी पर सोहंग पुरुष या सूक्ष्म प्रकृति का भंडार है. वह समस्त परिवार या कारण प्रकृति से प्राकट्य में आये हुये लोक-लोकान्तर, सूर्य, चन्द्रमा, तारागण और नक्षत्रों के साथ अपने स्रोत या कारण प्रकृति के आधार आत्मिक (रूहानी) देश के चारों ओर चक्कर लगाता रहता है.

इस जीवन चक्र में हर एक लोक या नक्षत्र अपने चक्र के अनुसार विशेष-विशेष समय पर विशेष नक्षत्रों और तारागणों के निकट आता रहता है. वर्तमान साइंस, जिसकी जाँच पड़ताल या खोज भौतिक स्थूल रचना तक सीमित है, सिद्ध करती है कि कई ऐसे नक्षत्र या तारे विद्यमान हैं जिनका प्रकाश पृथ्वी तक पहुँचने में सैकड़ों वर्ष लग जाते हैं.

मेरे अनुभव में यह आया है कि रूहानी (आत्मिक) रचना के नक्षत्रों में से कोई नक्षत्र जिनका नाम सत् लोक, अलख, अगम आदि रखा हुआ है, जब किसी दूसरे सूक्ष्म या स्थूल प्रकृति लोक के निकट आता है, तो उसकी धारें या किरणें उस लोक के जीवों में उनके अपने गुणों के अनुसार परिवर्तन करती हैं. यह बात केवल आत्मिक लोकों पर ही निर्भर नहीं है किन्तु हर प्रकार की प्रकृति का लोक अपने जीवन चक्र में जब किसी दूसरे लोक के सम्मुख होता है उसके जीवों में परिवर्तन कर देता है. ठीक इसी प्रकार करता है जिस प्रकार कि पृथ्वी का कोई भाग सूर्य के सामने आता है तो वह अधिक प्रकाश और गर्मी को स्वीकार करता है और उसका प्रभाव उस भाग के निवासियों पर पड़ता है.

अनुभव से मैं यह समझता हूँ कि करोड़ों वर्ष के बाद यह पृथ्वी जब सतलोक के निकट समानान्तर आती है तो उस समय सतलोक के गुण या आत्मिक और शाँति प्राप्त करने के संस्कारों का वक्र इस पृथ्वी पर आता है. स्मरण रहे कि सतलोक, अखल और अगम आदि भी ऐसे ही लोक हैं जैसे हमें दिखाई देने वाले सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी और अन्य नक्षत्र और

तारागण. अन्तर केवल यह है कि यहाँ स्थूल प्रकृति की रचना है और वहाँ कारण प्रकृति की और बीच में सूक्ष्म प्रकृति की.

प्रश्न -इसका कोई प्रमाण दीजिये.
उत्तर- इसका उत्तर मेरे अपने जीवन का अनुभव है. स्थूल जीवन और वस्तु है मानसिक जीवन कोई और वस्तु है और आत्मिक जीवन अन्य वस्तु है. तीनों प्रकार के जीवन में एक प्रकार की चेतना हर समय स्थित रहती है. मानव शरीर रचना में पूर्ण है. इसमें हर प्रकार की प्रकृति का अंश न्यूनता और अधिकता के साथ मौजूद रहता है. मनुष्य की इच्छा जितनी प्रबल होगी और तवज्जह में जितनी एकाग्रता होगी वह उसके अनुसार अपने अन्दर हर प्रकार की प्रकृति का अनुभव कर सकता हैं. मैंने अपने अन्दर बहुत हद तक विभिन्न प्रकार की प्रकृति की अलग-अलग अवस्थाओं में रहकर या ठहर कर निज अनुभव प्राप्त किया है. मैं केवल यही प्रमाण दे सकता हूँ.

अब प्रश्न पैदा होता है कि सतलोक आदि आत्मिक देशों में से कोई एक कितने समय के बाद पृथ्वी के सम्मुख या निकट आता है? मेरा निज अनुभव यह है कि जिस प्रकार मानव जीवन हर प्रकार के भोग भोगने के बाद उपराम की अवस्था आ जाने पर विवश होकर अपने आगे की यात्रा या मालिक के भजन पूजा की ओर आकर्षित होता है, इसी प्रकार पृथ्वी का सतलोक के सामने आना उस समय हुआ करता है जब उसका जीवनकाल समाप्त होने पर आता है. याद रहे कि पृथ्वी भी एक शरीर (जीव) है. इसमें हमारी तरह जान है. समय पर उत्पन्न होती, युवा अवस्था को पहुँचती और मर जाती है. हमारे शास्त्रों में इसकी आयु आदि का हिसाब कुछ विवरण के साथ आया है. उसके अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति से अब तक 1672949 वर्ष और 7 माह हुये हैं. जो चक्र इस समय दुनिया में चल रहा है इसको कलियुग कहते हैं. इस चक्र या युग के अन्त में मानव जगत में प्रलय के प्रभाव भय उत्पन्न करते हैं. मानव जाति अशान्त और दुखी रहने लगती है. विवश होकर या मजबूरन संत और फकीर जो आत्मज्ञान वाले पुरुष होते हैं, इस युग में पैदा होकर मानव जगत को उन भावों से छुटकारा दिलाते हैं और निर्भयता लाने का प्रयत्न करते हैं.

प्रश्न- आपने कहा कि मजबूर होकर संत और फकीर प्रगट होते हैं. मजबूरी क्यों?
उत्तर- जब गर्मी का जोर बढ़ता है, प्रकृति माता विवश होकर तेज हवा, आँधी और वर्षा लाती है. इसी प्रकार 'मांगो और मिलेगा' के सिद्धांत पर किसी वस्तु की अधिकता होती है

प्रकृति उसके हरण करने वाली वस्तु ( ) उत्पन्न कर देती है.

सतयुग त्रेता द्वापर बीता, काहु न जानी शब्द की रीता
कलियुग में स्वामी दया बिचारी. परगट करके शब्द पुकारी

वह शब्द क्या है? असली शब्द या अनहद शब्द वास्तव में आकाशीय रचना के ऊँचे से ऊँचे लोकों की किरणें या धारें हैं. उसके साधन से मनुष्य के अन्दर अशोकपना, अचिन्तपना, निर्भयता और अडोलपना आता है और इस त्रिगुणात्मक जगत की कष्टकारक भावनाओं से छुटकारा मिलता है. इसलिये आवश्यक है कि किसी पूर्ण पुरुष से जो स्वयं निर्भय, निर्वैर और अडोल गति में रहता हो, संस्कार या ( ) लिया जाय.

जिस प्रकार आकाशीय रचना के स्थूल व सूक्ष्म प्रकृति के लोकों के प्रभाव और विभिन्न प्रकार के भान-बोध जीव-जन्तुओं पर प्राभावन्वित होकर उन्हें दुखी और सुखी बनाते रहते हैं, इसी प्रकार आत्मिक लोकों के प्रभाव जीवों में अशोकपना, अचिन्तपना, निर्भयता और निर्वैरता पैदा करते हैं.

प्रश्न- इससे सिद्ध हुआ कि यह सब आकाशीय रचना, स्थूल, सूक्ष्म और कारण, लोक-लोकान्तर, देश या मंडल प्रकृति की पैदावार हैं, खेल हैं, तो वह क्या है जिसके सहारे यह सब कुछ बनता और बिगड़ता रहता है?

उत्तर- नहीं मालूम है वह क्या, वह परम तत्व आधार है.
ढूँढने निकला था उसको, वह बेअन्त अपार है
सैर करली खूब हमने, आसमां की दोस्तो
अब गुम होने को ज़ात में, यह फकीर तैयार है
क्यों आये थे इस जहाँ में, क्यों बनी है शक्ले इंसाँ
मौज जाने मौज के ही, सब कुछ अख़्तयार है
लब खुले और बन्द हुए यह राज़े जिन्दगानी है
जो इस जहाँ को खेल न समझे, वह निपट गंवार है

संसार में आये. भ्रम और अज्ञान ने छापा मारा. खोज का क्रम (सिलसिला) चल निकला कि वह आधार कौन है? कहाँ है? परिणाम यह निकला कि हमको ज्ञान हो गया कि हम कौन हैं

और दुनिया क्या है.

मौज का एक खेल है, उस आधार से निकली किरण
वह बनाती तबक मुल्क सब, जिसमें रहती खुद किरण
पहिला तबक है शब्द का, अरु दूसरा है नूर का।
शब्द नूर दोनों फैले, बन गये वह एक वरन
दोनों ही के मेल से, इक तीसरी हालत पैदा हुई
आत्मा जिसको हैं कहते, वह ही है आनन्द घन
आत्मा में फैलने और सोचने का गुण पैदा हुआ
वह ही फिर तो बन गया और कहलाया ब्रह्माण्डी मन
उससे निकल कर हजारों लोक और लोकान्तर बन गये
इन लोकों में हो गई अनुभव की जिन्दगी उत्पन्न
फिर वहाँ से धारें निकलीं, अरु बनाई शमसी दुनिया
स्थूल प्रकृति बनकर के, हस्ती करने लगी भ्रमण
ताकत जो थी उसमें पहिले, वह खतम होने लगी
लौट चली वापिस होकर, वह बनकर के बाअमन

आकाशीय रचना

लेख नं. 5

मित्रो, प्रेमियों और मिलने वालो! आकाशीय रचना के संबंध में जीवन में जो अनुभव प्राप्त किया, वह ऊपर के चार लेखों में प्रकट कर चुका हूँ.

निज अनुभव है निज अनुभव है, दावा है न किसी बात का
भेद पूरा किसने पाया, उस मालिक की ज़ात का
खब्त था यह दिल में मेरे, मिलूँ मालिक कुल जात को
जहाँ पहुँचा बता चला हूँ, अंजाम अपनी तहकीकात का

प्रश्न किया जायगा कि यह इच्छा क्यों उत्पन्न हुई. दर्द सिर क्यों मोल लिया गया. क्या पहले अनेक महापुरुषों, संतों और महात्माओं ने इस पर प्रकाश डालने में कोई कमी रखी है.

मित्रो! यह ठीक है. महापुरुषों, संतों और महात्माओं के वचनों में बहुत कुछ भिन्नता पाई जाती है. चूँकि मैं हृदय से सब का सम्मान करता हूँ उनकी वाणी को सत् (बरहक़) समझता हूँ, इसलिए उनकी वाणी में शक तो दिखाई नहीं देता. हाँ, यह शौक गले का हार बन गया कि अपने अन्दर हर वस्तु और प्रत्येक अवस्था का अनुभव प्राप्त करूँ और सचाई के साथ इसे प्रकट कर जाऊँ, ताकि वर्तमान और भावी मानव संतान को सच्चा पथप्रदर्शन हो सके. निज अनुभव ने सिद्ध किया है कि आज दिन तक लगभग प्रत्येक महापुरुष और महात्मा ने या तो समय की मसहलत की दृष्टि से अथवा किसी प्रयोजन या किसी धार्मिक पक्ष के वशीभूत पर्दादारी से काम लिया है. भले ही इसे कोई अहंकार, ख़ुद पसंदी और ख़ुदनुमाई समझे लेकिन यह सचाई है कि मैंने अपने जीवन में स्थूल, सूक्ष्म और कारण प्रकृति के लोक-लोकान्तर की खूब सैर की है और जो कुछ प्रगट किया वह मेरा निज अनुभव है.
प्रश्न किया जायगा कि फिर वह कौन है?

तलाश में गुम हुआ हूँ मित्रो न कोई दृष्टा न साक्षी है
एक परमतत्व महान शक्ति है, वह क्या है क्या नहीं है

चूँकि वह बुद्धि, अनुभव या बोध में नहीं आती, इसलिए इतना ही कह सकता हूँ कि वह है अवश्य.

जो गया ढूँढने इसे, वह खुद ही इसमें खो गया
क्या कहूँ ऐ दुनिया वालों, रूप मालिक का हो गया
बेफायदा जनून में आकर मजहब वाले लड़ते हैं
इस झगड़े को मिटाने के लिये, था गुरु बनकर आ गया
वही नानक वही कबीर और वही राधास्वामी दयाल
पंथ हाँ संतमत का था आकर चला गया
मैंने भी उनके नक्शे कदम पर चलकर दी आवाज़
ऐ इंसान इंसान बन, वहम वातिल में क्यों आ गया

इसलिए जब तक जीवन है खुशी से सैर करो, हँसो, मुस्कराओ, खेलो, कूदो. दूसरों को हँसाओं. आप खाओं। दूसरों को खिलाओं. साथ ही अपने आद्वाार मालिक कुल का द्वयान रड्कखो. यह कथन मेरे अपने जीवन के तजुर्बे और अनुभव का सारांश है.

स्थूल जगत में सुखपूर्वक रहने के लिए अपने शरीर को बलवान और स्वस्थ रखो. मानसिक दुनिया में सुखपूर्वक रहने के लिए अपने मन को बलवान रखो और आशावादी रहो. आत्मिक जगत की सैर करने के लिए अपनी आत्मा को बलवान रखो.

मगर स्मरण रहे कि शारीरिक, मानसिक और आत्मिक रूप से बलवान रहने के लिए बाहरी सहायता की आवश्यकता है और वह सहायता देने वाले डाक्टर, वैद्य, साधु, परमहंस और संत होते हैं. उनकी संगत का लाभ उठाओ.

यह भी याद रखो कि इन अवस्थाओं से परे भी एक अनुभव है. वह क्या है?

परम तत्व अनन्त शक्ति जो सब का आधार है
आप रचता इस जगत को, आप खिलावन हार हैं
इसकी लीला कौन जाने वह आप खुद मुख्तार है
जो कुछ होता इस जगत में इसका वही आधार है
जब यह अनुभव आ गया समझ लो इंसा हस्ती से पार है
जब राज़ मिल गया फिर कौन कहे गोमगू का दरबार है
आप अपने आप में वह आप करता बहार है
वह सर्व समरथ सर्व संकल्प आप सर्व जगत मुख्तार है

जब यह अवस्था आ जाती है. मनुष्य जीवन का खेल समाप्त हो जाता है. यह मेरे जीवन का परिणाम है. अहा हा हा हा हा.

जिन्दगी क्या है दोस्तो लब खुले और बन्द हुये
सैर करने आये हम अब सैर की और घर चले
मौज के आधीन है तन मन और रूह सब जीव की
मौज ने जो था कराना सब ही आकर कर चले
नहीं कोई बुरा है नहीं कोई भला है इस जा
खेल है यह सब कुदरती खेल अपना कर चले
राधास्वामी सतगुरु ने सैर करने को था कहा
सैर करली सैर होकर अब हम गुम होकर चले

हमदर्द दिल होकर दुनिया वालो कहे जाता हूँ एक बात
खुशी से गो सैर की अच्छे रहे नहीं तो दुख सह चले

आकाशीय रचना

लेख नं. 6

आज अकेला था. विचार हुआ कि मैंने जीवन भर इस बात की खोज की है कि इस रचना का रचने वाला कौन है और उसने क्यों इसे बनाया? इस पर जो कुछ अनुभव में आया है वह लेख बद्ध करता हूँ.

इस रचना का रचने वाला एक सूक्ष्मतर तत्व है या निर्मल शुद्ध तत्व है. इसका रंग भी है और रूप भी है मगर इसके रंग व रूप के प्रगट करने के लिए शब्द नहीं मिलते. इनकी कोई मिसाल या नजीर नहीं; इसलिये विद्वानों ने शब्द भी प्रकट नहीं किये. मेरे विचार में यही कारण है कि प्राचीन काल के खोजियों (researchers) ने इसको रंग और रूप बताया. वास्तव में यह रंग और रूप है नहीं. इसका रंग रूप केवल अनुभव में आता है.

प्रश्न किया जायगा कि क्या इसका कोई स्थान है? प्रत्यक्ष रूप से कोई स्थान नहीं, फिर भी वह स्थानीय है. वह कैसे? जैसे मेंहदी के पत्तों में लाली, गुलाब के फूल में सुगंध, शारीरिक जीवन में प्राण. इसी प्रकार वह तमाम रचना में और रचना के प्रत्येक प्राणी में विद्यमान रहता है. चूँकि वह प्रत्येक जीव का आधार है इसलिए सम्भव है कि संतों ने इसे अपना आपा कह दिया हो. यदि धृष्टता न समझा जाय, अहंकार न माना जाय और शिष्टाचार और सभ्यता के मंडल से ऊपर उठकर समझा जाय तो मैं कह सकता हूँ कि इस रचना का आधार मैं हूँ. मेरे सिवाय और कोई नहीं है मगर स्मरण रहे कि इस 'मैं' का अर्थ जो लोग फकीर चन्द की देह, मन या आत्मा लगावेंगे वह रहम्य या सार बात को समझने में गलती करेंगे. इन शब्दों को लेखबद्ध करते समय मैंने बड़े साहस से काम लिया है; क्योंकि मेरे सारांश को शायद बिरला समझेगा. इस वर्णन शैली से दुनिया में गुमरही फैलती है और मनुष्य को ग़लत कार्य करने का अवसर मिलता है.

अब मैं यदि कहूँ कि जो कुछ है वह परमतत्व आप ही आप है और यह रचना उससे स्वाभाविक रूप से प्राकट्य में आती रहती है. प्रकट होते रहने में स्वयं विभिन्न प्रकार के

जीव बनते रहते हैं तो भी बात समझ में नहीं आती क्योंकि दुनिया चाहती है कि उसे दिखाया जावे. इसलिए संतों, महात्माओं और अनुभवी पुरुषों ने उसको जानने, समझने और अनुभव करने का निज अनुभव के आधार पर एक मार्ग बताया है. वह क्या?

देह, मन और आत्मा (रूह) से निकल
जब निकल जाओगे इनसे तब
रह जायगा आप ही आपा
फिर होगा यकीन वह कौन है या तुम कौन हो,
आप में खुद वह आप है अपने आपा का आपा
क्षर अक्षर निःअक्षर पारा

इस अवस्था को प्राप्त करने के लिये मनुष्य में प्रबल तड़प, प्रेम और विरह की आवश्यकता है और इन बातों को वह स्वयं ही उत्पन्न करता है.

ज़ात हमारी ने रचना कीनी, खुद फंसी वह आनकर
आप ही आई उसको छुड़ाने, खुद को दुखी वह जानकर

जब वह तत्व कारण, सूक्ष्म और स्थूल प्रकृति का रूप धारण करके इस रचना में प्रवेश करता है तब विभिन्न प्रकार के चेतन व जड़ पदार्थ पैदा होते हैं. इसी तत्व के कारण वह पदार्थ गति में आकर भिन्न-भिन्न प्रकार की ग्रन्थियाँ बन जाते हैं. इसके प्रतिकूल जब वह तत्व किसी पदार्थ से निकल जाता है तो ग्रन्थि खुल जाती है और व्यक्तिगत अस्तित्व समाप्त हो जाता है. इसलिए मैं कहूँगा कि ग्रन्थि का बनना सृष्टि या उत्पत्ति है और खुलना प्रलय है. यह आकाशीय लोक जैसे पृथ्वी, नक्षत्र, तारागण और लोक-लोकान्तर वास्तव में एक-एक प्रकार की ग्रन्थियाँ हैं. प्रत्येक की एक विशेष मियाद या आयु होती है. इसी प्रकार यह सब-

होके प्रकट कायम रहकर होते रहते है फना
जो है असली तत्व उसको रहती है दायम बका

इसी प्रकार हमारे देह, मन और रूह (आत्मा) लय होते रहते हैं, परिवर्तन के नियम के आधीन हैं मगर हमारी ज़ात (निज स्वरूप) अजर-अमर है. वह तत्व उन तमाम लोकों,

मण्डलों, नक्षत्रों और तारागणों में आधार के रूप में विद्यमान रहता है. इसलिए उनमें भी छोटे पैमाने पर विभिन्न जीवों के रूप में रचना होती रहती है और समय आने पर इनमें समा जाती है. प्रत्येक बड़े लोक, मण्डल या नक्षत्र से उसका विशेष गुण या रेडियेशन (radiation) निकलता रहता है. वह गुण अपनी बारी पर नये-नये जीव और लोक-लोकान्तर बनाता रहता है. प्राचीन महापुरुषों और महात्माओं ने साधारणतया रचना को अनादि माना है और मैं भी उसको सत्य मानता हूँ मगर कुछ बदले हुए रूप में. वह यह कि रचना का कारण, जो आधार या परमतत्व का गुण या radiation है, अनादि है. उसके जो लोक या मण्डल प्रकट होते हैं वह परिवर्तनशील और नाशवान हैं. रेडीयेशन (radiation) या गुण का नाम संतों ने प्रकाश और शब्द रखा हुआ है. उसका विस्तार अपार है. दृश्यमान जगत, रचना या लोक और मण्डलों की लम्बाई-चौड़ाई तथा अन्य दशायें तो अनुभव में आ सकती हैं लेकिन शब्द और प्रकाश के विस्तार का अनुभव मेरे लिये असम्भव है. सम्भव है इस शब्द और प्रकाश के घेरे या अवस्था को ही सन्तों ने सत् लोक कहा हो. मेरा अनुभव यह है कि सत लोक या प्रकाश का और उस प्रकाश का जो उस परमतत्व का गुण है या रेडियेशन है, नाश है. सन्तों ने भी इसको सत्य ठहराया है.
अहा! हा!! हा!!! हा!!!!

उस दिन की आशा लग रही दायमी प्रकाश और शब्द फकीर हो जायेगा
हस्ती फ़कीरी जिस्म मन और रूह का नाश हो जायेगा
क्यों बना यह फकीरचन्द इसके बनने से क्या था फायदा
बनाया मौज ने इसलिये कि राज़ को बेग़रज़ हो कह जायेगा
ताकि जीव जो हैं मुतलाशी वह भरमे और भटके न संसार में
दौर इंसानियत का जहाँ में यह संतमत अब लायेगा
सिफात ने है दुनिया को मारा रंज गम और दुख पैदा किये
राज़े नहुफ्ता को खोलकर के अधिकारियों को कह जायेगा

वर्तमान समय के विज्ञानवेत्ता ऊपर के लोकों में जाने की लालसा रखते हैं और वहाँ के हालात को अपने स्थूल रूप की आँख, कान, नाक आदि से देखने और जानने के अभिलाषी है. यद्यपि उनकी विचारधारा असलियत की ओर है मगर याद रहे वह इस स्थूल शरीर का साथ रखते हुए उन तक पहुँचने के प्रयत्न में असफल रहेंगे. यद्यपि उनकी यह भावना प्राकृतिक है और दुनिया वाले आश्चर्य के साथ उनका मुँह ताक रहे हैं मगर क्रियात्मक

(practical) मार्ग को न जानने के कारण असफलता पल्ले पड़ेगी. मेरा अनुभव यह है कि मनुष्य की स्थूल प्रकृति और संकल्प शक्ति वहाँ तक काम दे सकती है जहाँ तक उसका संबंध व समानता स्थूल लोक या लोक-लोकान्तरों, नक्षत्रों और तारों से है. इसके आगे जहाँ समानता नहीं रहती वह साथ नहीं दे सकती. ऊपर के लोकों तक जाने का मार्ग अन्तर का साधन है.

उस तत्व के ऊपर प्रकृति के विभिन्न खोल चढ़े हुए हैं- स्थूल और सूक्ष्म- और समय आने पर प्रत्येक प्राणी इनको उतारना चाहता है. साधारणतया वह खोल उस प्रकृति के मानों (अर्थ) में लगाये जा सकते हैं जिससे हमारी देह मन और आत्मा बने हैं. साधारण दशा में इस जानकारी के लिये लम्बे समय और विस्तृत तजुर्बे की आवश्यकता है लेकिन पूर्ण पुरुष अपने सत् संग, वचन और सहानुभूति का सहारा देकर इन खोलों को जल्दी उतारने में सहायक होता है. यही कारण है कि संतमत में पूर्ण पुरुष की हिदायत और सत्संग पर जोर दिया जाता है.

सत्संग से मनुष्य को सांसारिक जीवन में भी बहुत सहायता मिलती है. यदि गुरु पूर्ण है और जिज्ञासु सच्चा खोजी और सचाई का अभिलाषी है तो ऐसे गुरु के सत्संग से मनुष्य को खुशी आनन्द और शांति सहज ही में प्राप्त हो जाती है. याद रहे कि खोल जो तत्व पर चढ़े हुए हैं, कई प्रकार के होते हैं और वह भी प्रत्येक व्यक्ति के अलग-अलग. पूर्ण पुरुष में यह प्राकृतिक शक्ति होती है कि वह मनुष्य की प्रकृति का अध्ययन करके हर व्यक्ति को इसकी परिस्थिति के अनुसार आदेश देता है. यदि जिज्ञासु उससे सत्संग में सच्चा प्रेम करे तो वह उसके असली तत्व को अपने आप में ठहरा लेता है. वह तत्व जिसका ऊपर वर्णन आया है, क्या है?

इस पर कबीर साहब का एक शब्द है :

घर घर दीपक बरै, लखे नहिं अंधा है
लखत लखत लखि परे, कटे जम फंदा है
कहन सुनन कछु नहि, नहीं कुछ करन है
जीते ही मर रहे, बहुरि नहिं मरन है
जोगी पड़े वियोग, कहें घर दूर है

पासहि रहत हुजूर, तू चढ़त खजूर है
बाम्हन दीक्षा देत, सो घर घर घालि है
सूर सजीवन पास, सो पाहन पालि है
ऐसा दास कबीर, सलोना आप है
नहिं जोग नहिं जाप, पुन्न नहिं पाप है

मरना क्या है? अपने आपको जानना. हम सब असलियत की दृष्टि से परमतत्व हैं मगर जब तक समझ नहीं आती, अपने आपे का ज्ञान नहीं होता, भौतिक खोल दूर नहीं हो सकते. विचार से यह समझ लेना कि हम कौन हैं बहुत कुछ लाभदायक हो सकता है मगर यह लाभ स्थायी नहीं रह सकता. इसलिये आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य अपने अंतर अपने आपको प्रकाश और शब्द रूप बनाने का प्रयत्न करे. उसके पश्चात् अनुभव प्राप्त होगा जो जीवन को शान्तमय, आनन्दमय और सुखदायक बना देगा. फिर गिरने का भय न रहेगा. यह अमली पहलू की बात है.

मेरा अस्तित्व क्यों बना? केवल इसलिये कि मनुष्य को अज्ञान और अनसमझी से छुटकारा दिलाया जाये. मज़हब की ग़लत समझ और ग़लत अहंकार दूर हो. मनुष्य सुख से जिये और दूसरों को जीने दे और सुख से व खुशी से जिये और दूसरों को जीने दे और सुख से व खुशी से मरे. यद्यपि बहुत कम लोग समझ सकते हैं लेकिन असलियत यह है कि जीवन और मृत्यु भ्रम मात्र हैं.

इसी भ्रम और अज्ञान ने, जो मानव जाति के दुख का कारण है, मुझे भी जीवन भर दीवाना बनाये रखा. किस प्रकार? चूंकि मनुष्य के तत्व पर विभिन्न प्रकार के खोल चढ़े हुये हैं इसलिये वह बात को न समझ सकेंगे. निज अनुभव के आधार पर यदि मैं यह कह दूँ कि समस्त संसार को प्रकृति, माया और समय के परिवर्तनों ने जो आकाशीय रचना के कारण पैदा होते रहते हैं, भरमाया हुआ है, तो ग़लत न होगा.

जो दुनिया में आये खुशी से जिये खुशी से मरे वही इन्सान थे
तलाश करने वाले इस जहां में सच कहूँ वहमी इन्सान थे

चुनाचे उनमें से मैं भी था. मनुष्य के भ्रम, अज्ञान को अथवा काल और माया के प्रभावों को

दूर करने के लिये कलियुग में संत प्रगट होते हैं और ऐसी शिक्षा देते हैं जिसके सहारे मनुष्य अपने आपको आकाशीय जगत के प्रभावों से सुरक्षित रख सकता है. वह अमली या क्रियात्मक शिक्षा किसी पूर्ण पुरुष के सत्संग से मिला सकती है. जब तक पूर्ण पुरुष का सत्संग प्राप्त नहीं होता, मनुष्य की बुद्धि निश्चयात्मक नहीं होती. निजी अनुभव भी जन्म-जन्मान्तर के सिलसिले में विस्तृत अनुभव के पश्चात स्वयं भ्रम और अज्ञान से छुटकारा दिला देता है मगर यह लम्बा रास्ता है.

थोड़े दिनों के सत्संग और अमल (साधन) से समझदार लोगों में परिवर्तन आ सकता है. हाँ, जो अभी तक तमोगुण के घेरे में रहते हैं उनको देर लगेगी. अनुभव होने के बाद आकाशीय रचना बंझा के बालक का विषय प्रतीत होने लगता है. नहीं कह सकता यह बुलबुला रूपी शरीर जिसको दुनिया फकीरचन्द के नाम से पुकारती है कब तक रहेगा. जीवन का अन्तिम समय है. जो कुछ मौज ने कराया कर चला हूँ. दाता दयाल की आज्ञावश और बाबा साँवलेशाह के प्रोत्साहन से सचाई के साथ इंसानियत (मनुष्यता) की शिक्षा का प्रारम्भ कर दिया है. यह शिक्षा विश्वव्यापी होकर रहेगी और भविष्य में आने वाले बुलबुले इसको विश्वव्यापी बनाने में अपना अपना पार्ट पूरा करेंगे.

मित्रो, संतों और फकीरों की तहरीर (लेख) सदा अधूरी होती है इसलिये सार बात का भेद जानने, समझने और पहचानने के लिये सत्संग की आवश्यकता है. सचाई यह है कि ईश्वर, परमेश्वर, ब्रह्म और पारब्रह्म आदि के अतिरिक्त और आकाशीय रचना है ही क्या! दूसरे शब्दों में नक्षत्र, तारागण, लोक-लोकान्तर सबके सब बाह्य और आंतरिक दृश्य आकाशीय जगत के अन्तर्गत आते हैं जो समय आने पर प्रगट होते, अपना खेल दिखाते और समय आने पर समाप्त हो जाते हैं. परमतत्व या निज स्वरूप जो इन सबका आधार है वह सदा अजर और अमर है. उसका वंश जब आकाशीय जगत के चक्कर में फंसकर दुखी हो जाता है तो अपने आपकी ओर तवज्जह देता है और सबका त्याग करके निज स्वरूप में लय होकर व्यक्तित्व को खो जाता है.

संतों और फकीरों ने मनुष्य के अन्दर विभिन्न प्रकार के केन्द्र माने हैं. इनमें चन्द्रमा, सूर्य, नक्षत्र, ईश्वर, परमेश्वर या ब्रह्म आदि का प्रतिबिम्ब अर्थात छोटे रूप में नमूना मौजूद है. वह इन केन्द्रों पर एकाग्रता करके इनका अनुभव कर सकता है. इन सबकी उत्पत्ति परमतत्व के शब्द और प्रकाश से होती रहती है जो वास्तव में परमतत्व का रेडियेशन है. इससे प्रगट है

कि मनुष्य का निज स्वरूप सबसे बढ़ कर है. विराट, अव्याकृत, हिरण्यगर्भ, सुन्न, महासुन्न आदि विभिन्न शक्तियाँ हैं, जो सांसारिक, मानसिक और आत्मिक खेल खेलाती रहती हैं. स्मरण रहे कि सांसारिक आशाओं और मानसिक सुखों को प्राप्त करने के लिये भी मनुष्य को अपने अंतर में ठहरना पड़ता है.

न ख़ुदा बनो न ब्रह्मा बनो, बल्कि इंसान बन के जियो
काम आओ एक दूसरे के, यही हम अनुभव कियो
उम्र हमने खोई अपनी, तलाश हक में दोस्तो
जो समझ आई आखिर में हमको, कह चले हैं दोस्तो
हर शख़्स का आधार है, जगात मालिक परम तत्व
वह है इंसान की ज़ात, अपनी तलाश खतम करो
हम सब हैं इसमें ऐसे, जैसे मछली पानी में
मेरी तरह दीवाना बन कर, खोज मत हरगिज करो
खुश रहो काम करो, रात दिन सुबह वो शाम
संतों की वाणी भेद वाली, का सदा सुमिरन करो
संतमत में आकर के, जो राज पाया भाइयो
टूटे फूटे शब्दों में फकीर परगट कर चलो
क्या खबर कब तक है मेला, इस फानी जहान में
ग़लती गर मुझ से हुई तो सब क्षमा करते चलो